अर्धवार्षिक पत्रिका
जनवरी, वर्ष 2014, अंक-5

अंतस्

संस्थान-स्थापना-दिवस : 2 नवम्बर, 2013

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर

परिसर के झरोखे से

सादर अनुरोध

1. "अंतस्" के आगामी अंक में प्रकाशन हेतु अति शीघ्र अपनी रचनाएं भेजने का कष्ट करें।
2. रचनाएं यथासंभव टाइप की हुई हों, रचनाकार का पूरा नाम, पद एवं पता अपेक्षित है।
3. रचना की विषय-वस्तु प्रौद्योगिकी, विज्ञान अथवा मानविकी विषयों पर आधारित होनी चाहिए।
4. आवश्यकतानुसार, लेखों में शामिल छाया-चित्र, आंकड़ों से संबंधित आरेख स्पष्ट होंने चाहिए।
5. प्रयुक्त भाषा सरल, स्पष्ट एवं सुवाच्य हिंदी भाषा हो।
6. अनूदित लेखों की प्रामाणिकता अवश्य सुनिश्चित करें। अनुवाद में सहायता हेतु संस्थान राजभाषा प्रकोष्ठ से संपर्क कर सकते हैं।
7. लेख मौलिक एवं अप्रकाशित होने चाहिए।

साभार
संपादन मंडल

नोट-पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, तार्किकता एवं सत्यता हेतु लेखकगण उत्तरदायी हैं।

संकेतक

शुभेच्छा

निदेशक की कलम से 1

उपनिदेशक की दृष्टि में 2

संपादकीय 3

बिरासत – बिसाती 4

गुरुदक्षिणा – डॉ. राजीव मोटवानी 6

साक्षात्कार – प्रोफेसर शिखा दीक्षित 6

साहित्ययात्रा

बेटी 11

गज़ल 11

आस्था और व्यापार 12

टुकड़ों में जिंदगी 13

सागर–प्रकाश 13

मुझे एक [F] से डर लगता है 14

मैं मरुथल की माटी हूँ 15

रेल का इंजन 16

अन्यायी कृष्ण 17

एक किताब दिला दे 17

संगीत शिक्षा एवं इसका महत्व 18

झूठ नहीं लिख पाता हूँ 19

ऐ मन मेरे 19

संबंधों का भार संभाले बैठे हैं 19

पैराशूट 20

चंदामामा दूर के... 20

सारा रास्ता 21

सांत्वना : सेमेस्टर समाप्ति पर 21

श्याम रंग 21

भारतीय प्रगति के विरोधाभास 22

डर 24

चेतन तत्व 25

बदलते आयाम 26

कानपुर : 1, कानपुर : 2 26

देवी, देवता और वाहन 27

दामिनी 28

यात्रा : एक विहंगम विचार 29

बुंदिया 31

सरोकार

हृदय रोग – कारण एवं निदान 33

छायाचित्र

संस्थान की गतिविधियाँ 35

भाषा–विमर्श

छंद 37

हिन्दी पत्राचार तथा सरकारी पत्र के प्रकार 38

हिंदी साहित्य–सभा

एक प्रयास 40

बालबत्तीसी

बगुला भगत 42

बालक बालिकाओं के लिए उपयोगी बातें 43

अनुचिंतन

सामान्य जन–जीवन का दर्पण–'राम की शक्ति–पूजा' 44

कार्यालयीन उपयोगी टिप्पणियाँ 47

अंतस् परिवार

संरक्षक
प्रोफेसर इन्द्रनील मान्ना
निदेशक

परामर्शदाता
प्रोफेसर सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव
उपनिदेशक

मुख्य संपादक
प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा

संपादक
डॉ. वेदप्रकाश सिंह

संपादन-सहयोग
प्रोफेसर समीर खांडेकर
प्रोफेसर सर्वेश चन्द्रा
प्रोफेसर हरीशचन्द्र वर्मा
प्रोफेसर शिखा दीक्षित
डॉ. ओमप्रकाश मिश्र

अभिकल्प
सुनीता सिंह

वर्तनीशोधन
विष्णु प्रसाद गुप्ता
जगदीश प्रसाद
भारत देशमुख

छायाचित्र
रवि शुक्ल

सहयोग
विद्यार्थी हिंदी साहित्य सभा

निदेशक की कलम से...

सामान्यत: हर देश की एक मूल संस्कृति होती है जिसके चतुर्दिक वहाँ का सामाजिक एवं शैक्षिक ताना-बाना व्यवहार में रहता है लेकिन सृष्टि में परिवर्तन के शाश्वत सिद्धान्त के अनुरूप समाज तथा शिक्षण के क्षेत्रों में भी यह परिवर्तन नैसर्गिक प्रक्रिया के रूप में सतत् समावेशित होता रहता है। वस्तुत: ऐसे परिवर्तन की उपस्थिति से ही सामाजिक व्यवस्था अथवा शिक्षण प्रणाली जीवन्त मानी जाती है। अत: शिक्षा के क्षेत्र को जड़ता से मुक्त रखना होगा। आवश्यकता इस बात की है कि नित नवीन शोधों, अन्वेषणों, परिवर्तनों को न केवल सर्वसमन्वेशी बनाया जाये अपितु इन प्रक्रियाओं में सम्मिलित छात्रों, वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों एवं समाज के तत्संबंधित स्तम्भों को यथासंभव एक स्वस्थ, अनुकूल, स्थायी वातावरण प्रदान हो जहाँ उन्हें व्यवधानरहित अग्रसर होने के सुगम अवसर प्राप्त हों, उनका संरक्षण हो, उन्हें अपनी परिलब्धियों का पूर्ण श्रेय मिले और कुंठा, अवसाद इत्यादि से उनका दूर-दूर तक कोई रिश्ता न रहे। ऐसी पृष्ठभूमि में ही राष्ट्र सुदृढ़ एवं अग्रणी बनता है।

संस्थान के राजभाषा प्रकोष्ठ द्वारा प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका "अंतस्" में लेखन की तमाम विधाओं को समावेशित और समन्वित रखने तथा सामयिक परिवर्तनों को समाहित करने का श्रेष्ठ उद्यम किया गया है जो निस्सन्देह सराहनीय है।

"अंतस्" का पंचम् अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है; समस्त लेखकों, रचनाकारों, सम्पादक मंडल एवं अन्य सहयोगियों को निरंतर योगदान हेतु हार्दिक साधुवाद। अपेक्षा करता हूँ कि रचनाकार अपने लेखन से इस साहित्यिक पत्रिका को समृद्ध करने में इसी प्रकार अनवरत् योगदान देते रहेंगे।

शुभकामनाओं सहित,

इ. मान्ना

इन्द्रनील मान्ना
निदेशक

उपनिदेशक की दृष्टि में...

प्रौद्योगिकीय शिक्षा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर भारत के अग्रणी संस्थानों में से एक है जहाँ देश की होनहार मेधा न केवल विज्ञान की विविध विधाओं में अपनी प्रतिभा को पंख देती है अपितु स्वयं में समेटे ज्ञान की अन्यान्य शाखाओं में भी समान रूप से अपने हुनर का परिचय देती है। "अंतस्" ने परिसरवासियों को अपनी प्रतिभा को हिंदी भाषा में लिपिबद्ध करके प्रस्तुत करने का एक सहज-सशक्त माध्यम उपलब्ध कराया है। मुझे हर्ष है कि संस्थान के छात्रों ने संस्थान कर्मियों तथा पत्रिका के अन्य सहयोगियों से कदम मिलाते हुए "अंतस्" में अपनी सहभागिता निरंतर बढ़ाई है और हिंदी साहित्य में अपनी प्रतिभा को भिन्न आयाम दिये हैं जिसके लिये उन्हें हार्दिक बधाई।

"अंतस्" का पंचम अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है सभी रचनाकारों, पत्रिका के भागीदारों और विचारमना पाठकों को बधाई एवं हार्दिक शुभकामनाएं।

सुरेश श्रीवास्तव

सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव
उपनिदेशक

सम्पादकीय

प्रिय पाठक,

आज 26 जनवरी 2014 को "अंतस्" का पाँचवां अंक आपके हाथ में हैं। सबसे पहले तो मैं आपको गणतंत्र दिवस की अनेकानेक बधाइयाँ देता हूँ। उसके बाद मैं अत्यन्त प्रसन्नता के साथ यह कहना चाहता हूँ कि "अंतस्" को आपका पूर्ण सहयोग प्राप्त हो रहा है। हमें संस्थान के सभी अंगों से मौलिक रचनाएं और प्रतिक्रियाएं प्राप्त हो रही हैं और उसके लिए "अंतस्" परिवार की ओर से आप सभी का धन्यवाद। अब क्योंकि हमें पर्याप्त संख्या में रचनाएं प्राप्त हो रही हैं तो हम ऐसे नियम भी विकसित कर रहे हैं जिनके माध्यम से रचनाओं का चयन वस्तुनिष्ठता, गुणवत्ता तथा मौलिकता के आधार पर किया जा सके।

चलिये अब कुछ गंभीर बात उठायें। प्रसिद्ध उपन्यासकार विद्याधर सूरजप्रसाद नायपॉल के अनुसार भारत में आज लाखों प्रकार की क्रांतियाँ चल रही हैं। क्योंकि भारत को इन लाखों प्रकार के दमन और शोषण से मुक्त होना है। हाल की घटनाओं ने महिला-मुक्ति के विषय को विशेष महत्व का बना दिया है। मेरा अपना भी मानना है कि सभी प्रकार के संघर्षों में महिलाओं का संघर्ष विशेष है। परिवार से लेकर विश्व स्तर तक की महिलाओं को अनेक प्रकार के दमन और उत्पीड़न का शिकार होना पड़ रहा है। इस अंक में हमनें प्रोफेसर दीक्षित का साक्षात्कार सम्मिलित किया है जो संस्थान की महिला यौन उत्पीड़न संबंधी समिति की अध्यक्षा हैं।

महिला सशक्तिकरण के रास्ते में एक नहीं हजार रोड़े हैं। अर्थव्यवस्था, पूँजी की सत्ता, धर्म, शिक्षा, सामाजिक परम्परायें, अघोषित परिवारिक मर्यादायें सभी के साथ संघर्ष करना पड़ेगा। किन्तु सबसे बड़ा संघर्ष तो महिलाओं को स्वयं के साथ करना है। प्राय: देखा जाता है कि धार्मिक, साम्प्रदायिक, पारिवारिक या अन्य कारणों से महिलाएं या तो चुप रहती हैं या उत्पीड़क का ही साथ देने को मजबूर कर दी जाती हैं। महिलायें अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए जिन सामाजिक अवधारणाओं का सहारा लेती हैं अंतत: वे उन्हें पीछे खींचने या डुबाने वाले ही होते हैं। वैवाहिक जीवन जीने का दबाव, वर की श्रेष्ठता, आर्थिक अनिर्भरता आदि से बाहर निकल कर महिला को वह क्षमता विकसित करनी है जिसके द्वारा वह केवल अपने बल पर एक अच्छा जीवन जी सके और उसे जीने के लिए पुरुष प्रधान समाज का अवलम्ब न लेना पड़े । उल्लेखनीय है कि स्वतंत्र जीवन प्रेम का विरोधी नहीं है। शुद्ध स्वतंत्रता के साथ ही शुद्ध प्रेम सम्भव है।

वैवाहिक जीवन से इतर स्त्री-पुरुष के संबंधों पर डॉ. लोहिया कहते थे कि स्त्री-पुरुष के संबंध द्रौपदी और कृष्ण के संबंधों जैसे होने चाहिए। ध्यान रहे कि द्रौपदी न कृष्ण की बहन थी, न पत्नी, न प्रेमिका, न माँ, न कोई साध्वी बल्कि केवल शुद्ध मित्र। चलो, भविष्य को एक समानता मूलक समाज बनाने के लिए इस विषय पर थोड़ा सोचें।

एक बार पुन गणतंत्र दिवस की बधाईयाँ। अपनी प्रतिक्रियायें अवश्य भेजें।

आपका शुभेच्छु

अरुण कुमार शर्मा

अरुण कुमार शर्मा

मुख्य संपादक

जयशंकर प्रसाद हिंदी साहित्य की एक अप्रतिम विभूति जिन्होंने अपने अल्प जीवन काल में ही काव्य, नाट्य, उपन्यास एवं कहानी इत्यादि जैसी विविध विधाओं में अपनी सृजनात्मक रचनाओं और उच्चस्तरीय लेखन से हिंदी साहित्य को सदैव के लिये परिपूरित कर दिया। यह अनायास नहीं है कि उनके लेखन को तुलसीदास (तथा सूरदास) के उपरान्त हिंदी साहित्य में सर्वश्रेष्ठ आंका गया है। साभार प्रस्तुत है उनकी एक कालजयी कहानी...

जयशंकर प्रसाद

बिसाती

उद्यान की शैल-माला के नीचे एक हरा-भरा छोटा सा गाँव है। बसंत का सुंदर समीर उसे आलिंगन करके फूलों के सौरभ से उसके झोपड़ों को भर देता है। तलहटी के हिम शीतल झरने उसको अपने बाहुपाश में जकड़े हुए हैं। उस रमणीय प्रदेश में एक स्निग्ध संगीत निरंतर बहा करता है, जिसके भीतर बुलबुलों का कलनाद, कंपन और लहर उत्पन्न करता है।

दाड़िम के लाल फूलों की रँगीली छाया संध्या की अरुण किरणों से चमकीली हो रही थी। शीरीं उसी के नीचे शिलाखंड पर बैठी हुई सामने गुलाबों की झुरमुट देख रही थी, जिसमें बहुत से बुलबुल चहचहा रहे थे, वे समीरण के साथ छूलछुलैया खेलते हुए आकाश को अपने कलरव से गुंजित कर रहे थे।

शीरीं ने सहसा अपना अवगुंठन उलट दिया। प्रकृति प्रसन्न हो हँस पड़ी। गुलाबों के दल में शीरीं का मुख राजा के समान सुशोभित था। मुँह में मकरन्द भरे दो नील भ्रमर उस गुलाब पर उड़ने में असमर्थ थे, भौरों के पद निस्पंद थे। कँटीली झाड़ियों की कुछ परवा न करते हुए बुलबुलों का उसमें घुसना और उड़ भागना शीरीं तन्मय होकर देख रही थी।

उसकी सखी जुलेखा के आने से उसकी एकांत भावना भंग हो गई। अपना अवगुंठन उलटते हुए जुलेखा ने कहा–शीरीं! वह तुम्हारे हाथों पर आकर बैठ जाने वाला बुलबुल, आज-कल नहीं दिखलाई देता?

आह! खींचकर शीरीं ने कहा – "कड़े शीत में अपने दल के साथ मैदान की ओर निकल गया। वसंत तो आ गया पर वह नहीं लौटकर आया।"

"सुना है कि ये सब हिंदुस्तान में बहुत दूर तक चले जाते हैं। क्या यह सच है, शीरीं?"

"हाँ प्यारी। उन्हें स्वाधीन विचरना अच्छा लगता है। इनकी जाति बड़ी स्वतंत्रता प्रिय है।"

"तूने अपने घुँघराली अलकों के पाश में उसे क्यों न बाँध लिया?"

"मेरे पाश उस पक्षी के लिए ढीले पड़ जाते थे।"

"अच्छा लौट आवेगा-चिंता न कर। मैं घर जाती हूँ।" शीरीं ने सिर हिला दिया। जुलेखा चली गई।

जब पहाड़ी आकाश में संध्या अपने रंगीले पट फैला देती, जब विहंग केवल कलरव करते पंक्ति बाँध कर उड़ते हुए गुँजान झाड़ियों की ओर लौटते और अनिल में उनके कोमल परों से लहर उठती, जब समीर अपनी झोंकेदार तरंगों में बार-बार अंधकार को खींच लाता, जब गुलाब अधिकाधिक सौरभ लुटाकर हरी चादर में मुँह छिपा लेना चाहते थे तब शीरीं की आशा भरी दृष्टि कालिमा से अभिभूत होकर पलकों में छिपने लगती। वह जागते हुए भी एक स्वप्न की कल्पना करने लगी।

हिंदुस्तान के समृद्धिशाली नगर की गली में एक युवक पीठ पर गट्ठर लादे घूम रहा है। परिश्रम और अनाहार से उसका मुख विवर्ण है। थककर वह किसी के द्वार पर बैठ गया है। कुछ बेचकर उस दिन की जीविका प्राप्त करने की उत्कंठा उसकी दयनीय बातों से टपक रही है। परन्तु वह गृहस्थ कहता है- तुम्हें उधार देना हो तो दो, नहीं तो अपनी गठरी उठाओ। समझे आगा?

"युवक कहता है-" मुझमें उधार देने की सामर्थ्य नहीं।"
"तो मुझे भी कुछ नहीं चाहिए।"
शीरीं अपनी इस कल्पना से चौंक उठी। काफिले के साथ अपनी संपत्ति लादकर खैबर के गिरि—संकट को वह अपनी भावना से पदाक्रांत करने लगी।
उसकी इच्छा हुई कि हिंदुस्तान के प्रत्येक गृहस्थ के पास हम इतना धन रख दें कि वे अनावश्यक होने पर भी उस युवक की सब वस्तुओं का मूल्य देकर उसका बोझ उतार दें। परन्तु सरला शीरीं निस्सहाय थी। उसके पिता एक क्रूर पहाड़ी सरदार थे। उसने अपना सिर झुका लिया। कुछ सोचने लगी।
संध्या का अधिकार हो गया। कलरव बंद हुआ। शीरीं की साँसों के समान समीर की गति अवरुद्ध हो उठी। उसकी पीठ शिला से टिक गई।
दासी ने आकर उसको प्रकृतिस्थ किया। उसने कहा-"बेगम बुला रही हैं। चलिए मेंहदी आ गई है।"
महीनों हो गये। शीरीं का ब्याह एक धनी सरदार से हो गया। झरने के किनारे शीरीं के बाग में शवरी खींची है। पवन अपने एक-एक थपेड़े में सैकड़ों फूलों को रुला देता है। मधु-धारा बहने लगती है। बुलबुल उसकी निर्दयता का क्रंदन करने लगते हैं। शीरीं सब सहन करती रही। सरदार का मुख उत्साहपूर्ण था। सब होने पर भी वह एक सुंदर प्रभात था।
एक दुर्बल और लंबा युवक पीठ पर गट्ठर लादे सामने आकर बैठ गया। शीरीं ने उसे देखा पर वह किसी ओर देखता नहीं। अपना सामान खोलकर सजाने लगा।
सरदार अपनी प्रेयसी को उपहार देने के लिए काँच की प्याली और कश्मीरी सामान छाँटने लगा।
शीरीं चुपचाप थी, उसके हृदय-कान में कलरवों का क्रंदन हो रहा था । सरदार ने दाम पूछा। युवक ने कहा-"मैं उपहार देता हूँ। बेचता नहीं। ये विलायती और कश्मीरी सामान मैंने चुनकर लिए हैं। इनमें मूल्य ही नहीं हृदय भी लगा है। ये दाम पर नहीं बिकते।"
सरदार ने तीक्ष्ण स्वर में कहा-"तब मुझे न चाहिए। ले जाओ-उठाओ।" "अच्छा, उठा ले जाऊँगा। मैं थका हुआ आ रहा हूँ, थोड़ा अवसर दीजिए, मैं हाथ-मुँह धो लूँ।" कहकर युवक भरभराई हुई आँखों को छिपाते उठ गया।
सरदार ने समझा, झरने की ओर गया होगा। विलम्ब हुआ पर वह न आया। गहरी चोट और निर्मम व्यथा को वहन करते कलेजा हाथ से पकड़े हुए, शीरीं गुलाब की झाड़ियों की ओर देखने लगी। परन्तु उसकी आँसू-भरी आँखों को कुछ न सूझता था। सरदार ने प्रेम से उसकी पीठ पर हाथ रखकर पूछा-"क्या देख रही हो?"
"एक मेरा पालतू बुलबुल शीत में हिंदुस्तान की ओर चला गया था। वह लौटकर आज सवेरे दिखलाई पड़ा, पर जब वह पास आ गया और मैंने उसे पकड़ना चाहा, तो वह उधर कोहकाफ की ओर भाग गया।" — शीरीं के स्वर में कंपन था, फिर भी वे शब्द बहुत सम्हलकर निकले थे। सरदार ने हँसकर कहा- "फूल को बुलबुल की खोज? "आश्चर्य है।"
बिसाती अपना सामान छोड़ गया। फिर लौटकर नहीं आया। शीरीं ने बोझ तो उतार लिया, पर दाम नहीं दिया।

स्रोत-प्रसाद रचना संचयन

साभार — श्री हरिवंशराय बच्चन

कहते हैं तारे गाते हैं

कहते हैं तारे गाते हैं!
सन्नाटा वसुधा पर छाया,
नभ में हमनें कान लगाया,
फिर भी अगणित कंठों का यह राग नहीं हम सुन पाते हैं!
कहते हैं तारे गाते हैं!

स्वर्ग सुना करता यह गाना,
पृथ्वी ने तो बस यह जाना,
अगणित ओस-कणों में तारों के नीरव आँसू आते हैं!
कहते हैं तारे गाते हैं!

ऊपर देव, तले मानवगण,
नभ में दोनों गायन—रोदन,
राग सदा ऊपर को उठता, आँसू नीचे झर जाते हैं।
कहते हैं, तारे गाते हैं!

स्रोत-निशा निमंत्रण

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया। चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
"जिसने अज्ञानता के अंधकार से अंधे हुए जीव की आँखों को ज्ञानरूपी काजल की शलाका से आलोकित किया है, ऐसे श्रीगुरु को प्रणाम है।"

पाश्चात्य चिंतन के उपनिवेशवादी बंधनों और पूर्वाग्रहों से मुक्त होती हुई विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संपृक्त भारतीय चिंतनधारा ने आज भी अपनी सांस्कृतिक धरोहर को अपना प्रतिपाद्य बनाया है । कहना अनुचित न होगा कि संस्कृति और संस्कार ही मानव जाति को प्राणियों मे श्रेष्ठ बनाते हैं और भारतीय प्रायद्वीप में अनादि काल से चली आ रही गुरु-शिष्य परंपरा जहां गुरु एवं शिष्य दोनों को न केवल साधनारत बनाये रखती है अपितु यह सीख भी देती है कि सच्चे शोधकर्ता की सृजनशीलता लोगों की पारस्परिक तुलना नहीं करती बल्कि वह क्रियाशील रहती हुई मानव मात्र की सेवा करती रहती है । भारतवर्ष को समझने का अर्थ है गुरु-तत्व को समझना । शिष्य को ज्ञान की अनुभूति तभी होती है जब शिष्य गुरु के समक्ष परिप्रश्न, सेवा तथा प्रणिपात अर्थात् समादर भाव से समर्पण करता हुआ विनयावनत होता है । गुरु का सनातन अव्यक्त रूप ही व्यक्ताव्यक्त होकर छात्र का जीवन-चरित्र बनता है । इतिहास इस बात का साक्षी है कि हमारे मेधावी एवं कर्तव्यनिष्ठ शिष्यों ने गुरुओं के पदचिह्नों पर चलते हुए, राष्ट्र एवं समाज की सेवा करते हुए गुरु-शिष्य परंपरा का अथकित चिरन्तन निर्वहन किया है । गुरु की शरण में उन्हें यह ज्ञान हो जाता है कि जीवन जीने की सार्थकता क्या है? जीवन को सार्थक बनाने के लिए उनके संकल्प को इस पंक्ति से समझा जा सकता है, "छोड़ जाऊँ तुम्हारे प्रदत्त ज्ञान का शतांश भी इस विश्व में, वही होगी सच्ची गुरुदक्षिणा हमारी ओर से ।"

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के विद्यार्थियों ने भी गुरुदक्षिणा के इसी भाव को न केवल जिया है बल्कि विज्ञान एवं अभियांत्रिकी शिक्षा के सूक्ष्मतम ज्ञान से सम्पूर्ण जगत को चमत्कृत किया है । यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि इन्हीं गुणों को आत्मसात् करके यहाँ के विद्यार्थी देश-विदेश में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा रहे हैं ।

"अंतस्" पत्रिका के अंतस्थल में यह भावना प्रमुख रूप से विद्यमान रही है कि पत्रिका के स्थायी स्तम्भ "गुरुदक्षिणा" के माध्यम से हम सुधी पाठकों को संस्थान के उन मेधावी पूर्व छात्रों से परिचित करवाएँ जिन्होंने अपनी मेधा के बलबूते उपार्जित धन को संस्थान के भविष्योन्मुखी विकास के लिए समर्पित किया है। और निश्चित तौर पर ऐसे विद्यार्थियों में डॉ. राजीव मोटवानी जी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है । इस कड़ी में हम अपने पाठकों को डॉ. राजीव मोटवानी जी से मिलवाते हैं जो विधि के विधनानुसार हमारे बीच भौतिक रूप से तो विद्यमान नहीं हैं किन्तु उनके कर्म एवं उनकी उदारता आज भी हमारे स्मृति पटल पर कायम है । लेखनी के माध्यम से हम स्व.मोटवानी को अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं ।

24 मार्च, 1962 को जन्मे राजीव एक उच्च एवं अनुशासित परिवार से ताल्लुक रखते थे । उनके पिता भारतीय सेना में लेफ्टिनेंट कर्नल के पद पर तैनात थे । देश के अनेक स्थानों पर उनके पिता की तैनाती होने के कारण उनकी आरंभिक शिक्षा अलग-अलग स्थानों पर अलग अलग परिवेश में हुई । बचपन से ही तीव्र मेधा के धनी राजीव मोटवानी एक गणितज्ञ बनना चाहते थे और उन्होने कार्ल फ्रैडरिक गाउस को अपना हीरो भी बना रखा था । उन्हीं के शब्दों में "This was partly shaped by the books I had at my home. My parents for some reasons had a lot of books-ten great scientists or five famous mathematicians- their life story As a child whatever heroes you read about, you want to become." डॉ. मोटवानी के बड़े भाई अतीत का स्मरण करते हुए बताते हैं कि सात साल की उम्र से ही राजीव ने पुस्तकों को अपना मित्र बनाना आरंभ कर दिया था; उन्हें अलग-अलग विधाओं जैसे-उपन्यास, कॉमिक्स, आत्मकथा एवं विज्ञान की पुस्तकें पढ़ने का बहुत शौक था । कहते हैं, "जहाँ चाह है, वहाँ राह है" और डॉ. राजीव मोटवानी ने किशोरावस्था में ही इस बात को सिद्ध करके दिखा दिया था, जब उन्होंने कठिन परिश्रम एवं लगन से नई दिल्ली स्थित बहुप्रतिष्ठित सेंट कोलंबिया हाईस्कूल में प्रवेश पाया । गौरतलब है कि डॉ. मोटवानी ने सेंट कोलंबिया हाईस्कूल की प्रवेश-परीक्षा में इतना शानदार प्रदर्शन किया था कि उनके साथ-साथ उनके दोनो भाईयों को भी उसी विद्यालय में प्रवेश दे दिया गया। इस घटनाक्रम के बाद ही उनकी एक विशेष योग्यता का पता चला और वह थी गणित विषय में उनकी सशक्त पकड़ । अपनी इसी योग्यता एवं क्षमता के बल पर डॉ. मोटवानी ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग में बी.टेक. की कक्षा में प्रवेश लिया ।

डॉ. राजीव मोटवानी

डॉ. मोटवानी ने उच्च स्तरीय तकनीकी शिक्षा ग्रहण करने के लिए हर चुनौती को स्वीकार करते हुए सन् 1983 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर से संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विषय में बी. टेक. की पढ़ाई सफलतापूर्वक पूरी की और जीवन में कुछ विशेष करने के उद्देश्य से वह अमेरिका चले गये जहाँ उन्होंने सन् 1988 में यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया, बर्कले से प्रोफेसर रिचर्ड कार्प के निर्देशन में पीएच.डी. की पूर्ण की। उनके कॉलेज के दिनों के मित्र कहा करते थे, 'He is not only brilliant, but also fun loving' जो उनके हँसमुख स्वभाव का परिचायक है। डॉ. मोटवानी ने अपने चिर-परिचित स्वभाव को अपने पेशेवर जीवन में भी शिद्दत से जिया । उनके मित्र बताते हैं कि पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त करने के बाद जब उन्होंने स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के संगणक विज्ञान विभाग में प्राध्यापक के रूप में अध्यापन-कार्य प्रारंभ किया तब भी उनके स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं आया। डॉ. मोटवानी को शीघ्र ही शिक्षक तथा कम्प्यूटर विशेषज्ञ के रूप में ख्याति मिलनी शुरु हो गई। गूगल सर्च इंजन के संस्थापक सर्गेई ब्रिन एवं लैरी पेज अपने विद्यार्थी जीवन से ही डॉ. राजीव मोटवानी को अपना आदर्श मानते थे और प्रायः अपने सर्च इंजन प्रोजेक्ट पर उनसे तकनीकी परामर्श लिया करते थे । उनकी उद्यमशीलता के बारे में डॉ मोटवानी स्वयं कहते थे "These 21year olds would come in and make demands on me – we need more disk space because we are crawling the web and it's getting bigger..... I would give them more money and they would go and buy more disks" अंततः ब्रिन और पेज की उद्यमशीलता और डॉ. मोटवानी का परामर्शी निर्देशन फलीभूत हुआ और गूगल सर्च इंजन का जन्म हुआ । डॉ. मोटवानी के विज्ञानी व्यक्तित्व और तकनीकी विशेषज्ञता से अभिभूत सर्गेई ब्रिन और लैरी पेज ने डॉ. राजीव मोटवानी को अपनी कंपनी 'गूगल' में तकनीकी सलाहकार के रूप में आमंत्रित किया जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया और तदुपरान्त वे गूगल कंपनी से सलाहकार के रूप जुड़े रहे। गूगल के संस्थापक ब्रिन उन्हें एक अच्छा दोस्त एवं शिक्षक मानते हैं। श्री ब्रिन ने उनके निधन पर अपनी संवेदनाएँ प्रकट करते हुए लिखा, "..... his legacy and personality lives on in the students, [projects] and companies he has touched. उनकी विरासत एवं व्यक्तित्व की छाप उन विद्यार्थियों, परियोजनाओं तथा कंपनियाँ, जो उनके संपर्क में आयीं, में जीवन्त है। Today, whenever you use a piece of technology, there is a good chance a little bit of Rajeev Motwani is behind it...आज, जब आप किसी तकनीक का इस्तेमाल कर रहे होते हैं तो इस बात की पूरी संभावना है कि उसके पीछे किसी न किसी रूप मे राजीव मोटवानी हैं , "If Rajeev had not been there, chances are, there would be no Google today" यदि राजीव नहीं होते तो आज शायद गूगल भी नहीं होता। डॉ. राजीव एक उच्चकोटि के अन्वेषक थे, उन्होंने बहुत सारे विषयों जैसे-Randomized algorithms, Computational complexity, Approximation, Algorithms, Data mining, Mathematical modeling of the world-wide web आदि

पर मौलिक शोध किए हैं। डॉ. मोटवानी ने Google के अतिरिक्त बड़ी संख्या में नवोदित कंपनियों के परामर्शदाता के रूप में भी अपनी सेवाएं दी हैं जिनमें Silicon Valley, Mimosa, Weebly, Aster Data, एवं eBay आदि का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। डॉ. राजीव जी का हमेशा यह प्रयास होता था कि उनसे परामर्श लेनेवाले वेतनभोगी कर्मचारी न बने बल्कि अपना स्वयं का उपक्रम स्थापित कर नियोक्ता बनें और अपने साथ-साथ दूसरों को रोजगार प्रदान करें। डॉ. राजीव की गणना महान शिक्षकों मे होती है उन्होंने बतौर सहयोगी लेखक 'प्रभाकर राघवन' के साथ "*randomized algorithms*" एवं 'जॉन होफ्क्राफ्ट' और 'ज़ाफरी उलमान' के साथ "*Introduction to Automata Theory, Languages, and Computation*" दो किताबें लिखीं हैं जो दुनिया भर में संगणक विज्ञान के शैक्षणिक पाठ्यक्रम का हिस्सा हैं। डॉ. राजीव उन पाँच शोधकर्ताओं में से एक थे जिन्होंने विश्व को चमत्कृत करनेवाली और आधुनिक युग में दूरगामी नतीजे देनेवाली "PCP Theorem" उपलब्ध कराया है। इस अन्वेषण में डॉ. मोटवानी के योगदान को रेखांकित करते हुए उन्हें वर्ष 2001 में प्रतिष्ठित Godel Prize प्रदान किया गया था। डॉ. मोटवानी बड़े मित्रवत् स्वभाव के इंसान थे जिसको उन्होंने ताउम्र कायम रखा। स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी में उनका कार्यालय दुनियाभर के विद्यार्थियों, युवा उद्यमियों एवं शिक्षाविदों के लिए हमेशा खुला रहता था।

वे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग के परामर्शदाता के रूप में विभाग के शोध-कार्यक्रमों के साथ गहराई से जुड़े हुए थे। वर्ष 2003 से वह विभाग की शोध-संस्था के बोर्ड में भी शामिल थे। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर ने डॉ. मोटवानी को संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी के क्षेत्र में उनके उत्कृष्ट योगदान एवं शैक्षणिक उपलब्धियों के लिए वर्ष 2006 में "प्रतिष्ठित पूर्व छात्र पुरस्कार" [Distinguished Alumnus Award] से सम्मानित किया। डॉ. मोटवानी को प्रदान किये गये पुरस्कारों एवं सम्मानों की एक लंबी फेहरिस्त है जिनमें: The Godel Prize [one of the most prestigious awards in theoretical computer science], The Okawa Foundation Research Award, The Arthur Sloan Research Fellowship, The National Young Investigator Award from the National Science Foundation, The Bergmann Memorial Award from the US&Israel Bi-national Science Foundation, and an IBM Faculty Award प्रमुख हैं।

5 जून, 2009 विज्ञान और अभियांत्रिकी दुनिया के लिए स्तब्ध करने वाला था जब लोगों को पता चला कि शानदार व्यक्तित्व और विलक्षण प्रतिभा के धनी डॉ. राजीव मोटवानी अब नहीं रहे। प्रकृति के इस क्रूर निर्णय ने लोगों को मायूस कर दिया। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के अधिष्ठाता, संकाय-कार्य प्रोफेसर मणींद्र अग्रवाल ने अपने शोक-संदेश में लिखा - "मुझे अभी भी याद है कि जब PCP Theorem की घोषणा हुई थी तो लोगों में बड़ी उत्सुकता थी, हमें गर्व की अनुभूति होती है कि इस टीम में संस्थान का एक पूर्व छात्र शामिल है.....यद्यपि मैं उनसे स्टैनफोर्ड में एक ही बार मिला था लेकिन तब से पिछले चार सालों में अनेक अवसरों पर शोध और संस्था के बारे में फोन और ई-मेल के जरिये बातें होती रहती थीं। वह अच्छे प्रस्ताव पर परामर्श एवं सहायता के लिए सदैव तत्पर रहा करते थे।"

डॉ. मोटवानी की पत्नी श्रीमती आशा जडेजा तथा दोनों बेटियों नैत्री और आन्या ने डॉ. मोटवानी की स्मृति में उनकी 49वीं जयंती पर भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के शैक्षणिक परिसर में ही 'मोटवानी भवन' के निर्माण हेतु $1.5 मिलियन भेंट किया है। संस्थान के अधिकृत वास्तुकार मेसर्स कनविन्दे, राय और चौधरी द्वारा अभिकल्पित निर्माणाधीन मोटवानी भवन 3650 वर्ग मीटर में फैला हुआ है। चूंकि डॉ. मोटवानी विद्यार्थियों को वेतनभोगी कर्मचारी बनने की बजाय सदैव अपनी कंपनी स्थापित कर नियोक्ता बनने के लिए प्रेरित किया करते थे, इसलिए संस्थान ने 6 तलीय मोटवानी भवन के ऊपरी तल को विद्यार्थियों में उद्यमशीलता को बढ़ावा देने एवं उन्हें सफल उद्यमी बनाने हेतु आयोजित कार्यक्रमों के लिए चिह्नित किया गया है। इसके अतिरिक्त इस भवन में 200 कुर्सियों वाला एक क्लास रूम, 16 प्राध्यापक कार्यालय एवं 17 प्रयोगशालाएं होंगी। इस भवन से संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग से संबन्धित गतिविधियां संचालित की जाएंगी और डॉ. मोटवानी के शोध-कार्यों से प्रभावित उद्यमिता एवं नवोचार को पोषित करने वाली विचारधारा को बढ़ावा दिया जाएगा। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर एवं राजीव मोटवानी फाउन्डेशन का यह संयुक्त प्रयास संस्थान के विकास और प्रगति के प्रति उनकी प्रतिबद्धता की सनद है। आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि यह विद्यार्थियों एवं प्राध्यापक उद्यमियों के प्रगतिशील नवीन विचारों एवं तकनीक को सफल उद्यम में चरितार्थ करने में मददगार साबित होगा। "मोटवानी भवन" एक प्रेरणा के प्रतीक के रूप में संस्थान समुदाय को सदैव जीवन, जगत और ज़िम्मेदारी के प्रति प्रेरित करता रहेगा और स्वर्गीय राजीव मोटवानी की स्मृति को जीवंत रखेगा।

संस्थान समुदाय की तरफ से 'अंतस्' परिवार श्रीमती आशा जडेजा एवं उनकी पुत्रियों नैत्री और आन्या के प्रति आभार ज्ञापित करता है।

राजभाषा प्रकोष्ठ

इतिहास की यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए। धन तो आता और जाता है। धन से हीन होने पर कोई नष्ट नहीं होता है किन्तु इतिहास और अपना प्राचीन गौरव नष्ट कर देने पर विनाश निश्चित है।

वेद व्यास (महाभारत)

जिस भारतवर्ष की आराधना हिन्दी साहित्य के महाकवि सुमित्रानंदन पंत ने "भारतमाता ग्रामवासिनी" लिखकर किया था, जहां सदियों से "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता" जैसे उद्धरण देकर भारतवर्ष में महिलाओं को पारिवारिक और सामाजिक दृष्टि से अत्यंत उच्च स्थान दिया जाता रहा है वहीं आज कालगति के साथ बदलते परिवेश व दूसरी सभ्यताओं के अंधानुकरण ने समाज के उस ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर दिया है जिस पर हम सभी गर्व किया करते थे। आबादी की लगभग आधी संख्या का प्रतिनिधित्व करने वाली स्त्री अपनी ही कोख से उत्पन्न पुरुष के वैचारिक पतन, अनाचार और उत्पीड़न से इस कदर भयभीत हो चुकी है कि इस संदर्भ में आखिरकार सर्वोच्च न्यायालय को हस्तक्षेप करना पड़ा।

चूंकि विषय सरकारी कार्यालयों में कार्यरत महिलाओं के साथ होनेवाले यौन-उत्पीड़न की रोकथाम है, अतः सीधे-सीधे मुद्दे पर आते हुए बतलाना चाहते हैं कि विशाखा और अन्य बनाम राजस्थान सरकार और अन्य के बीच 90 के दशक में चलने वाले मुकदमे [JT1997 (7) SC384, को आधार बनाकर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि संस्थानों के मुखिया का यह दायित्व होगा कि संस्थान में कार्यरत किसी भी महिला के साथ यौन-उत्पीड़न न हो।न्यायालय ने यह भी निर्धारित कर दिया कि परोक्ष व अपरोक्ष रूप से निम्नलिखित व्यवहार यौन-उत्पीड़न की श्रेणी में आएंगे:

1- शारीरिक स्पर्श अथवा उसका प्रयास

2- यौन संबंध की अभ्यर्थना

3- द्विअर्थी, अश्लील टिप्पणी

4- अश्लील साहित्य अथवा पिक्चर का प्रदर्शन

केंद्रीय सिविल सेवा [आचरण], नियमावली 1964, संख्या 3 (1) (iii) 1964 के मद्देनजर समस्त सरकारी कर्मचारियों को समझना होगा कि कार्यरत महिलाओं के साथ किसी भी प्रकार का यौन-उत्पीड़न का व्यवहार कदाचार की श्रेणी में आता है और ऐसी दशा में उपयुक्त अधिकारी के लिए आवश्यक होगा कि वह कदाचारी कर्मचारी के विरुद्ध उचित अनुशासनात्मक कार्रवाई करे।

उपर्युक्त के आधार पर तथा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दिशा-निर्देश पर भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर में भी 'महिला प्रकोष्ठ' की स्थापना की गयी जिसकी अध्यक्षा मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग की संकाय सदस्य डॉ. शिखा दीक्षित जी को बनाया गया। प्रकोष्ठ उपाध्यक्ष गणित एवं सांख्यिकी विभाग की संकाय सदस्य डॉ. नंदिनी नीलकंठन जी हैं। प्रकोष्ठ में अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष को लेकर कुल 11 सदस्य हैं जिनमें एक महिला सदस्य निदेशक द्वारा बाहर से नामित की गईं हैं जो आवश्यकता पड़ने पर महिला प्रकोष्ठ की सहायता करेंगी।

महिला प्रकोष्ठ को अधिकार होगा कि वह महिला संकाय सदस्यों, महिला कर्मचारियों, छात्राओं तथा संस्थान परिसर में निवास करने वाली दूसरी अन्य महिलाओं से संबन्धित शिकायतों का संज्ञान लेकर मामले का निस्तारण करे। मामलों की परिस्थितियों को देखते हुए समिति जितनी बार

चाहे अपनी बैठक कर सकती है। यदि समिति के समक्ष कोई मामला नहीं है तो उस दशा में भी समिति को प्रत्येक तिमाही में बैठक करनी है और तत्सम्बंधी रिपोर्ट यथा शीघ्र निदेशक को प्रस्तुत करनी है।

महिला प्रकोष्ठ की अध्यक्षा को यह स्वतः अधिकार होगा कि वह संज्ञान में आए मामलों की जांच कर आवश्यक कार्रवाई हेतु अपनी रिपोर्ट निदेशक को प्रेषित करे। महिला प्रकोष्ठ का यह भी उत्तरदायित्व होगा कि वह समय-समय पर किसी भी प्रकार के लिंग-भेद अथवा यौन-उत्पीड़न संबन्धित आचरण के शमनार्थ आवश्यक कारवाई हेतु संस्थान-प्रशासन को अपनी संस्तुति भेजे। समिति की संस्तुति पर अंतिम निर्णय लेने से पहले महिला प्रकोष्ठ की अध्यक्षा से सलाह-मशविरा एक आवश्यक प्रक्रिया होगी लेकिन महिला प्रकोष्ठ के पास प्रशासनिक कार्यवाही हेतु कार्यकारी अधिकार नहीं होगा।

संस्थान द्वारा लिए गए सामान्य प्रशासनिक अथवा अनुशासनिक निर्णयों से उत्पन्न शिकायतें महिला प्रकोष्ठ के अधिकार क्षेत्र से बाहर होंगी। अपने कार्यकाल की समाप्ति पर महिला प्रकोष्ठ निदेशक महोदय को टर्मिनल रिपोर्ट प्रस्तुत करेगी।

उपर्युक्त विवरणात्मक तथ्य कार्यालय आदेश संख्या DIR/IITK/2013/28 दिनांकित 19 मई, 2013 पर आधारित है।

संस्थान में स्थापित महिला प्रकोष्ठ की पृष्ठभूमि, कार्य-प्रणाली और उद्देश्य जैसी तमाम बातों को प्रकोष्ठ की अध्यक्षा डॉ. शिखा दीक्षित के समक्ष एक साक्षात्कार के दौरान रखा गया जिसपर डॉ. दीक्षित ने बड़ी बेबाकी से अपने विचार रखे हैं; प्रस्तुत है उसी साक्षात्कार के प्रमुख अंश:

सुनीता : मैडम! आप इस प्रकोष्ठ से कब और कैसे जुड़ीं?

डॉ.शिखा दीक्षित: देखो सुनीता! ये तो सभी को पता है कि आजकल जहां तक महिलाओं की संरक्षा, सुरक्षा का प्रश्न है हमारे देश का समाज कहाँ पर खड़ा नज़र आता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार को आदेशित किया कि प्रत्येक संस्थान में कार्यरत महिलाओं की किसी भी प्रकार के यौन-उत्पीड़न से सुरक्षा सुनिश्चित की जाए। उसी प्रक्रिया के तहत इस संस्थान में भी महिला प्रकोष्ठ की स्थापना की गई है। न्यायालय के दिशानिर्देशानुसार प्रकोष्ठ की अध्यक्षा किसी महिला अधिकारी को ही होना है। तो इस प्रकोष्ठ से इसके संस्थापन के समय से ही मैं अध्यक्ष के रूप में संबद्ध हूँ।

यहाँ यह ग्यातव्य है कि यद्यपि महिला प्रकोष्ठ की स्थापना 2013 में हुई है किन्तु संस्थान ने काफी समय पूर्व से ही महिला यौन उत्पीड़न समिति का गठन किया हुआ था और मैं इस समिति के संस्थापन के समय से ही संबद्ध हूँ। डॉ.नंदिनी नीलकंठन इस प्रकोष्ठ की उपाध्यक्ष हैं, कुल मिलकर 11 सदस्य हैं।

सुनीता सिंहः प्रोफेसर दीक्षित! अब जब कि आप संस्थान में महिला प्रकोष्ठ के संस्थापन के साथ ही इसके अध्यक्ष के रूप में जुड़ी हुई हैं, आप अपनी शैक्षणिक पृष्भूमि को प्रकोष्ठ के कार्य को प्रभावी बनाने में किस प्रकार सहायक मानती हैं ?

डॉ. शिखा दीक्षितः संस्थान में मैं अपनी शैक्षणिक पृष्ठभूमि के आधार पर मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान में मनोविज्ञान की संकाय सदस्य के रूप में पदस्थ हुई। यद्यपि पुरुष एवं स्त्री समाज के अविछिन्न अंग है तथापि यौन-उत्पीड़न की समस्या एक सामाजिक अपराध एवं विधिक विषय है और इसे उसी रूप में देखना होगा। एक मनोविज्ञानी होने के नाते हमारे लिए समस्या की तह तक पहुँचना और उसका समाधान खोजना अपेक्षाकृत सरल होगा ऐसा मैं मानती हूँ।

सुनीताः एक तरफ तो हमारे समाज में शिक्षा का उत्तरोत्तर विस्तार होता जा रहा है जब कि इसके विपरीत समाज में यौन-उत्पीड़न के मामले बढ़ते जा रहे हैं। आप इस समस्या का आकलन किस प्रकार करती हैं?

डॉ. दीक्षित! यह सही है कि भारतीय समाज में शिक्षा का निरन्तर विकास-विस्तार हो रहा है लेकिन जहाँ तक यौन-उत्पीड़न की समस्या का प्रश्न है, तो यह शिक्षा से कहीं अधिक सामाजिक वातावरण, परिवेश तथा मानव-मनोविज्ञान से प्रभावित होता है। आज समाज में अतीत के संस्कारित मानदण्ड धीरे-धीरे करके दरक रहे हैं और उनमें एक अजीब खोखलापन सा लगने लगा है। परिवार और समाज का युवाओं पर नियंत्रण खत्म हो रहा है। बेरोजगारी और भ्रष्टाचार ने समाज के हर अंग को प्रदूषित कर दिया है। मेरे विचार में वर्तमान की दुख:द स्थिति के मूल कारक प्रमुखतः यही हैं। महिलाओं में शिक्षा का स्तर बढ़ रहा है लगभग हर क्षेत्र में आज की महिला हमारे पुरुष प्रधान समाज में उसकी बराबरी कर रही है कई क्षेत्रों में तो वह प्रमुख पदों पर विराजमान है। कदाचित पुरुष का अहं इससे आहत होता हो क्योंकि अनेक मामलों में देखा गया है कि महिलाओं का यौन-उत्पीड़न अहं और आत्म-तुष्टि के लिए किया गया है। वस्तुतः ऐसे कई कारण हैं जो इस तरह का माहौल पैदा कर रहे हैं जहां पर महिलाओं के साथ दुराचार की संभावना बढ़ जाती है। हमें यही समझना और समझाना होगा कि महिलाएं अब दोयम दर्जे की नागरिक नहीं रह गई हैं। भोग की वस्तु से बहुत आगे निकाल कर अब वह भाग्य की उत्सर्जक बन गई हैं। मेरे विचार से यह समझना बहुत जरूरी है कि महिलाएं तब तक पूरी तरह से यौन-उत्पीड़न जैसे सामाजिक कुकृत्यों से निजात नहीं पाएँगी जब तक वे खुद इस महामारी से लड़ने का मन नहीं बनातीं। सरकारी अनुदेश और निर्देश पर संस्थाओं में महिला-प्रकोष्ठ की स्थापना उसी दिशा में उठाया गया एक सकारात्मक कदम है। जिसका निहितार्थ यही है कि एक तरफ यौन-उत्पीड़न जैसे अपराधों से समाज को मुक्त बनाया जाए और दूसरी तरफ महिलाओं को सशक्त और निर्भीक बनाया जाए ताकि कार्यालयों में भय-मुक्त वातावरण का निर्माण हो सके और उनके व्यक्तित्व का नैसर्गिक विकास हो सके।

सुनीताः मैडम! संस्थान में यदि महिला उत्पीड़न के मामले संज्ञान में आते हैं, तदस्थिति में अथवा इस समस्या को निरुद्ध करने हेतु आपके मतानुसार संस्थान द्वारा क्या किया जा सकता है ?

डॉ. शिखा दीक्षितः सुनीता जी देखिए, हमारा संस्थान उच्च शिक्षा का एक विश्व-प्रसिद्ध राष्ट्रीय महत्व का संस्थान है जहाँ शिक्षार्थी के साथ-साथ यहाँ के संकाय-सदस्य, कर्मचारीगण, परिसर वासी आदि सभी सुशिक्षित लोग हैं मसलन इस परिसर में साक्षरता शत-प्रतिशत है ऐसा हम मानकर चलते हैं। हम अपने परिसर के समाज में इस चेतना को और जाग्रत, प्रसारित व विस्तारित करेंगे जिससे संस्थान में आदर्श वातावरण बने। यदि संस्थान में दुर्भाग्यवश ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है तो आपके माध्यम से हम परिसर वासियों को सूचित करना चाहते हैं कि पीड़ित महिला प्रकोष्ठ से सीधे संपर्क कर सकती है, हमारे कार्यालय अथवा घर के टेलीफोन नंबर पर या ई-मेल के माध्यम से हमको सूचित कर सकती है ।हम ये आश्वश्त करना चाहते हैं कि महिला प्रकोष्ठ शिकायतकर्ता के नाम को गुप्त रखने के लिए प्रतिबद्ध है।

सुनीताः मैडम! कृपया संस्थान में महिला प्रकोष्ठ को प्रदत्त शक्तियों तथा कार्यशैली के बारे में पाठकों को अवगत करायें।

डॉ. शिखा दीक्षितः जहाँ तक महिला प्रकोष्ठ में निहित शक्तियों की बात है, इसे संस्थान में कार्यरत महिला संकाय एवं कर्मचारियों, अध्ययनरत छात्राओं, परिसर में रहने वाली किसी भी महिला से संबंधित शिकायतों का स्वप्रेरणा एवं स्वतंत्र रूप से संज्ञान लेने एवं उसकी जाँच करने की शक्ति प्रदान की गई है। इसी कड़ी में महिला प्रकोष्ठ अपने में निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए यौन-उत्पीड़न से संबंधित मामले की स्वतंत्र जाँच कर सकेगा और जाँच के उपरान्त संस्थान के निदेशक के समक्ष उचित कार्रवाई हेतु रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

सुनीताः महोदया ! आप 'अंतस्' पत्रिका एवं इसके पाठकों के लिए क्या संदेश देना चाहेंगी ?

डॉ. शिखा दीक्षितः 'अंतस्' नि:संदेह एक स्तरीय पत्रिका है। आप सबका सम्मिलित प्रयास सचमुच सराहनीय है। आप लोग 'अंतस्' के इस अंक में पाठकों को संस्थान में गठित महिला प्रकोष्ठ के बारे में समुचित जानकारी दे रहे हैं, यह जानकर मुझे सुखद अनुभूति हुई है। यह एक अच्छा प्रयास है क्योंकि संस्थान के एक बड़े वर्ग को उक्त प्रकोष्ठ में निहित शक्तियों तथा कार्यशैली के बारे में अभी तक भली-भाँति रूप से ज्ञान नहीं है। मैं महिला प्रकोष्ठ के सभी सदस्यों तथा अपनी ओर से 'अंतस्' की पूरी टीम को बहुत बहुत बधाई देती हूँ एवं इसके और समुन्नत होने की कामना करती हूँ।

बहुत-बहुत धन्यवाद!

श्री अंसार कम्बरी जी कानपुर शहर के मशहूर शायर हैं। स्वाभाविक इंसानी जज़्बातों के सच्चे चितेरा कंबरी जी ने अपनी नज़्मों एवं गज़लों की नुमाइन्दगी से देश-विदेश में कानपुर शहर की नुमाइन्दगी को रौशन किया है। हिंदुस्तानी सभ्यता की धरोहर लालकिले से अपनी शायरी का मुज़ाहिरा करने वाले कंबरी जी ने साभार अपनी रचनाएं "अंतस्" में प्रकाशित किये जाने हेतु अनुमति प्रदान की है;
उसके लिए साधुवाद!

श्री अंसार कम्बरी जी

बेटी

प्रश्न! जीवन के हल नहीं होते,
यार बेकार माथा पच्ची है।
उसको मारो न जन्म से पहले,
ये तो सोचो तुम्हारी बच्ची है
.....

आँख का काजल तुम्हारे पास है
पाँव की पायल तुम्हारे पास है।

माँ की ममता बाँटने के वास्ते,
प्यार का आँचल तुम्हारे पास है।

बाँध कर धागा किसी के हाथ में,
भाई का सम्बल तुम्हारे पास है।

मातृ-भाषा बोलता है हर कोई,
आने वाला कल तुम्हारे पास है।

सुख में, दुख में आचमन के वास्ते,
नेह गंगा जल तुम्हारे पास है।

इस समय की, उस समय की बात क्या,
हर सदी का पल तुम्हारे पास है।

जन्म लेते वीर तेरी कोख से,
ऐसा बाहु-बल तुम्हारे पास है।

खिलखिलाते फूल ये किलकारियाँ,
जिंदगी का फल तुम्हारे पास है।

गज़ल

टूटे हैं हमपे इतने सितम टूट गये हैं,
सच कह रहे हैं तेरी कसम टूट गये हैं।

देखा जो हमने छू के तो एहसास हुआ है,
आईना तो टूटा नहीं हम टूट गये हैं।

हम बन्द किये आँख जहाँ देख रहे थे,
आँखें खुली तो सारे भरम टूट गये हैं।

मयखाने नहीं जायें तो फिर जायें कहाँ हम,
बस्ती में सभी दैरो-हरम टूट गये हैं।

फ़नकार हुए जब से कलम बेचने वाले,
है क़म्बरी जो अहले-कलम टूट गये हैं।

आस्था और व्यापार

परिवार में बुजुर्गों से निर्देश मिला है कि नवरात्रि में पूरी आस्था से मैं दुर्गा सप्तशती के पाठ और पूजा अर्चना पर ध्यान दूँ। घर से तब तक न टलूँ, जब तक प्रात-कालीन पाठ न समाप्त हो जाये। इन दिनों भोजन जल-पान पर ध्यान कम दूँ और बाजार में माँ दुर्गा की प्रतिमा को सजाने के लिए जितने परिधान और सामग्री बिक रही है, उन सभी को खरीद कर लाऊँ। मैं बाजार में दौड़ गया और देखकर दंग रह गया कि हर दुकान में पूजा अर्चना की सामग्री अटी पड़ी है। बेचने और खरीदने वालों की भीड़ से शहर की सड़कें जाम हैं। जो लोग कल तक पाकिस्तान और हिंदुस्तान की लड़ाई और कश्मीर–अमेरिका की चर्चा में व्यस्त थे। आज वे दुर्गा देवी के पाठ में लगे थे। इस आध्यात्मिक लहर को देख भला कौन नहीं चकित होगा?

नवरात्रि में मेरी दिनचर्या में भी परिवर्तन आया। सुबह ही नहा लेता था और सृष्टि की आदि–शक्ति माँ दुर्गा को स्मरण करते हुए फूलों की माला खरीदने बाजार दौड़ जाता था और मन ही मन प्रार्थना करता था-हे देवी!-तुम सृष्टि की सकारात्मक शक्तियों की पुँज हो। मुझे इस नवरात्रि में प्रेरणा दो कि मैं अपनी आंतरिक शक्तियों को जागृत कर सकूँ। माँ भगवती के प्रति सारी आस्था, सम्मान के भाव के बावजूद मेरा चंचल मन बाजार के भौतिक आकर्षण के बीच अपनी आध्यात्मिक वृत्ति भूल जाता था। जब मैंने अपनी दुर्बलता अपनी धर्मपत्नी को बतायी तो उन्होंने धूम्र विलोचनी जैसी आँखों से मुझे देखा। उस दृष्टि निक्षेप में मैंने माँ दुर्गा के दर्शन किये। उनका निर्देश था कि नवरात्रि काल में प्रत्येक पुरुष को चौबीस घंटे भजन, वंदन, जप और ध्यान में लीन रहना चाहिए। इससे जीवन संयमित होता है। यदि संयोगवश कोई अपराध हो जाए तो पुरुष को माँ से क्षमा माँग लेनी चाहिए।

नवरात्रिकाल में माँ दुर्गा के प्रति मेरी घोर आस्था देख मेरी श्रीमती जी बहुत प्रसन्न थीं। इसलिए मैं भी निश्चिंत था कि ये नौ दिन परिवार में शांति और अहिंसा में कटेंगे। इसी प्रसंग में उन्होंने मुझे एहसास दिलाया कि यदि मेरे जीवन में उन जैसी नारी का पर्दापण नहीं हुआ होता तो मैं असुरों के समाज से मुक्त होकर आज देवतुल्य पति का आसन कभी नहीं ग्रहण कर पाता। मैं भी अपने सुधार के लिए बहुत बेचैन था। वास्तव में अनेक अनुशासन, अंकुश और संयम के बाद भी मुझमें कुछ कमियाँ रह गयी थी। एक दिन चप्पल पहने ही मैं पूजाघर में घुस गया। इस गलती पर मेरी विवेकहीनता और अनास्था को बहुत कोसा गया। तभी मैंने सोचा कि वर्कशॉप में जाने से मैं सुधर जाऊँ। मैं उस स्थान पर पहुँचा वहाँ कई दीवारों पर दुर्गा, काली, भगवती, सरस्वती आदि अनेक नामों के पोस्टर लगे थे। महिषासुर का विनाश करती हुई माँ दुर्गा की आँखें देख मैं भयभीत हो गया। उसमें गारन्टी दी गयी थी कि शुल्क जमाकर तीन दिनों के प्रशिक्षण के बाद कोई भी दुर्गाभक्त बन सकता है। शक्ति की अधिष्ठाता देवी उसे प्रत्येक विघ्न बाधा से लड़ने की शक्ति देगी। उन विज्ञापनों को पढ़कर मैं मुग्ध हो गया।

मैंने उस आदमी की मन ही मन प्रशंसा की जिसने माँ दुर्गा पर वर्कशॉप चलाने की सबसे पहली योजना बनायी होगी। देश के हजारों देवी-देवताओं के पूजा घरों और तीर्थों में मैंने आध्यात्मिक बाजारों को बसते और विकसित होते देखा था।

वर्कशॉप व्यावसायिक गतिविधि बढ़ाने का एक नया विचार था। अब आध्यात्मिकता भी बैंक-बैलेन्स का जरिया बन गयी है। पंडे, पुजारी, ज्योतिषाचार्य और पूजा सामग्री के दुकानदार लखपति और करोड़पति बन गये हैं। वर्कशॉप में पूजा, अर्चना, ध्यान, आरती, मूर्ति का श्रंगार और शंखनाद आदि के महत्व को समझाया जाता था। मेरे मोहल्ले की दसियों औरतों ने उस वर्कशॉप में प्रवेश लिया था इससे कितने पतियों को राहत मिली होगी, मैं सोचने लगा। वस्तुत: आस्था ने भी अब व्यापार का रूप ले लिया है। आध्यात्मिकता के इस व्यवसायीकरण पर हमें बड़ी खुशी है। शार्टकट में सारी पूजा सम्पन्न हो जाती है। ऐसे वर्कशॉप पर माँ देवी दुर्गा की कृपा बनी रहे।

राजेश कुमार श्रीवास्तव
तकनीकी अधीक्षक

टुकड़ों में जिंदगी...

टुकड़ों-टुकड़ों में कुछ ऐसे, जी रही है जिंदगी
न जीती है पूरी तरह, न थम रही है जिंदगी

कब शाम हो जाये यहाँ, कुछ पता ही नहीं
सालों-सालों का, पर हिसाब, रख रही है जिंदगी

अरसा हो गया, खुद से मुखातिब हुए
अब मैं को मैं से अनजान, पा रही है जिंदगी

उड़ता हूँ, साख से, टूटे पत्ते की तरह
हवाओं के रुख पर, अब चल रही है जिंदगी

कौन हूँ और किसलिए, जवाब मिलते ही नहीं
सवाल ये बार-बार, दोहरा रही है जिंदगी

जमाने से न ली, एक साँस खुद के लिए
साँसों की धौंकनी, ढो रही है जिंदगी

कैसी ये आपाधापी, कैसी ये मारामारी
दो पल सुकून के, न नसीब है जिंदगी

बुतखाने से बाहर, तुझे देखा नहीं कभी
तू है भी, या नहीं, कश्मकश में जी रही है जिंदगी

कभी गुज़रे कल की यादें, कभी आने वाले का भ्रम
अभी-आज में नहीं, कल-कल में जी रही है जिंदगी

चलना सीखा है जबसे, बे-सिम्त जा रहा हूँ
बिन मंजिल के रास्ते, अब आ खड़ी है जिंदगी

चिपका हुआ है साया बन, इक अधूरापन मेरे साथ
बुझे जो चिराग, तब ही पूरी होगी ये जिंदगी...

प्रोफेसर भारत लोहनी
सिविल अभियांत्रिकी

सागर-प्रकाश

अविरल रेवा* धारा पूछे,
रुकता है तू क्यों हर पल?
मिलने सागर की लहरों से,
संग मेरे तू आज निकल चल।

शंकित मन ले, क्यों तू भटके?
डूब के मुझमें धुंध मिटा चल।

तट पर क्यों, तू कंकड़ बीने?
अम्बुधि धन संजोने संग चल।

दुविधा में मन को, क्यों डाले?
शांत समुंदर पार चला चल।

ज्ञान क्यों ढूंढ़े, उथले जल में?
गहराई का मंत्र समझ चल।

टेक गड़ा क्यों, आवरणों में?
पाश धरा के तोड़ के फिर चल।

मिलने सागर की लहरों से,
संग मेरे तू आज निकल चल।

* नर्मदा नदी का पर्यायवाची

प्रोफेसर समीर खांडेकर
यांत्रिक अभियांत्रिकी

मुझे एक [F] से डर लगता है:

उस सुबह मौसम बहुत ठंडा था - कानपुर सर्दियों में वैसे भी बहुत ठंडा रहता है और आईआईटी में तो हमेशा से ही शहर की तुलना में ज्यादा ठंडक पड़ती है। उस दिन 5वें सत्र की उत्तर पुस्तिकायें दिखाई जानेवाली थीं। शुरू से ही मैकेनिकल इंजीनियरिंग का पाठ्यक्रम, विशेष रूप से तीसरे वर्ष का, मेरे लिए बहुत मुश्किल साबित हो रहा था। मैं हमेशा से ही अपनी शैक्षिक योग्यता के प्रति चिंतित रहा करता था क्योंकि मैं देख रहा था कि दिन-प्रतिदिन मेरा ग्रेड फिसल रहा था।

उसका कारण भी मुझे पता था क्योंकि मैंने उस पूरे सत्र में या तो पिक्चरें देखने में समय बिताया था या हिन्दी में कवितायें लिखने में; मैंने नया कम्प्यूटर जो खरीदा था। मैंने अपना अधिकांश समय अपने विद्यालय की पत्रिका के सम्पादन और ऐसी ही गतिविधियों में भी बिताया था और यही सब कारण थे जिनकी वजह से मैं अपने पाठ्यक्रम में पीछे हो गया था।

मशीनों की थ्योरी मैकेनिकल इंजीनियर्स के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण कोर्स होता था। इस पाठ्यक्रम का संबंध मशीनी कल-पुर्जों से अवश्य रहा होगा, लेकिन मुझे इसके बारे में ज्यादा समझ में नहीं आया। यद्यपि यह प्रोफेसर अशोक मलिक द्वारा पढ़ाया जाता था जिन्हें केवल कुछ ही महीने पहले, शिक्षक दिवस के अवसर पर सर्वश्रेष्ठ अध्यापक के रूप में सम्मानित किया गया था। किस्मत से उस समय मैं छात्रों की सीनेट का कार्यवाहक संयोजक था और इस तरह मैं सर्वश्रेष्ठ अध्यापक चुनने की प्रक्रिया का एक हिस्सा था। मैं व्यक्तिगत रूप से डॉ. मलिक का बहुत सम्मान करता था। वे आईआईटी कानपुर में सबसे प्रतिष्ठित और सम्मानित शिक्षकों में से एक थे। लेकिन इन सारी चीजों ने भी मुझे मशीनों की थ्योरी को समझने में कोई मदद नहीं की। वस्तुतः मैं आज भी यह समझने के लिए संघर्ष करता रहता हूँ कि एक कैमरा या एक गियर-बॉक्स कैसे काम करता है?

शैक्षणिक सत्र की अंतिम परीक्षा 130 अंकों के लिए आयोजित की गई थी और जहां तक संभव था मैंने सभी सवालों को हल करने का प्रयास किया था. लेकिन मैं उस दिन डर गया था जिस दिन उत्तर पुस्तिकायें दिखाई जानी थीं। हम सभी को लैब में बुलाया गया और सभी को उत्तर पुस्तिकाएँ दे दी गईं। अधिकांश प्रश्नों के उत्तर में मुझे 1 या 2 अंक मिले थे और कुल मिलाकर 130 में से 13 अंक मुझे प्राप्त हुये थे। कुछ ही मिनटों में मुझे पता चल गया था कि 70 छात्रों के बैच में मेरा स्थान न्यूनतम अंक पाने वालों में दूसरा था। यद्यपि आई आई टी कानपुर में सत्र-परीक्षा में पास करने के लिए कम से कम प्राप्तांकों का कोई निर्धारित मापदंड नहीं था। इसे पूरी तरह से अनुदेशक के विवेकाधिकार का क्षेत्र माना जाता था फिर भी मैं निराश था कि हमारे द्वारा प्राप्त 10% अंक कतई सम्मानजनक अंक नहीं थे जिससे कोई आशा बंध सके। यह मेरा सबसे न्यूनतम स्कोर था जो मुझे अभी तक के जीवन में मिला था। मुझे पता था कि यदि प्रोफेसर मलिक दो छात्रों को भी फेल करते हैं तो उसमे से एक मैं हूंगा। मैंने प्रो. मलिक से निवेदनपूर्वक पूछा कि कम से कम कितने अंक मिलने पर वह पास करेंगे तो उन्होंने बताया कि उसे सार्वजनिक नहीं किया जा सकता। जब शैक्षणिक-कार्य-कार्यालय के नोटिस बोर्ड पर 'F' पानेवालों की सूची चस्पा की जाएगी तभी हम जान सकेंगे कि मैं विषय में पास हूँ अथवा फेल।

मैं, अपने कमरे में वापस आ गया और बेहद डरा हुआ था। पीछे बोकारो में मेरे घर पर दो हफ्ते बाद मेरे भाई की शादी होने वाली थी और मेरे माता पिता आयोजित होने वाले वैवाहिक कार्यक्रम की तैयारी में व्यस्त थे।

मेरे पास इतनी हिम्मत नहीं बची थी कि मैं अपने घर फोन करके उन्हें बता सकूँ कि क्या हुआ है? मुझे याद आ रहा था कि स्कूल के दिनों में मैं छह साल तक लगातार अपनी कक्षा में अव्वल था लेकिन यहाँ मैकेनिकल इंजीनियरिंग में मेरा प्रदर्शन अत्यंत निराशाजनक था। मैं सोचने लगा "क्या वास्तव में मैं एक बेवकूफ हूँ? मुझमें यांत्रिकी समझने के लिए औसत बुद्धि भी नहीं है?" विभिन्न विचार मेरे मन में आ रहे थे मुझे लगा कि मैं रोऊँ लेकिन मैं ऐसा कर नहीं सका। मैं यह सोचकर ही सहम जाता था कि जब मेरे माता-पिता को पता चलेगा कि मैं फेल हो गया हूँ तो वे मेरे बारे में क्या सोचेंगे। हमारा पूरा परिवार और नाते-रिश्तेदार सभी मेरे भाई की शादी में होंगे और वे सभी लोग मुझ पर और मेरे माता-पिता पर हँसेंगे। मैं हॉस्टल की छत पर चढ़ गया और वहाँ से कूद जाने के बारे में सोचने लगा लेकिन ऐसा करने का साहस नहीं जुटा पाया। मेरे दोस्त ने मुझे समझाया और प्रो. मलिक से मिलने की सलाह दी। मैंने भी एक और कोशिश करने का फैसला किया।

मैं अगले दिन डॉ. मलिक से मिलने उनके चैम्बर में गया लेकिन उन्होने मुझे नहीं पहचाना। मैंने उन्हें बताया कि "मैं" 'थ्यौरी ऑफ मेकैनिक्स' का छात्र हूँ और मुझे सत्रांत परीक्षा में पूरे बैच में दूसरा सबसे कम स्कोर मिला है। मैंने उनसे पूछा कि "क्या मुझे 'F' ग्रेड मिलेगा अथवा मुझे पास घोषित किया जाएगा। उन्होने बड़ी शालीनता से कुछ भी बताने से इंकार कर दिया। मैं यह जानने के लिये अड़ा हुआ था। मैंने उन्हें बहुत सारी चीजें बतायीं। मैंने बताया कि मेरे भाई की दो सप्ताह में शादी होने वाली है और कैसे मेरे माता पिता मुझसे काफी उम्मीद करते हैं और यह भी कि मैं हमेशा एक अच्छा विद्यार्थी रहा हूँ। मैंने उन्हें वचन भी दिया कि अगले सत्र से मैं कठिन परिश्रम करूंगा। लेकिन डॉ. मलिक मुस्कराते रहे और मुझसे पूछा, "चंद्र मोहन, तुम इस परीक्षा में असफल होने से इतना क्यों डर रहे हो?अगर एक 'F' मिल जाएगा तो कौन सी मुसीबत आ जाएगी?"

मैं विचलित था। मुझे लगा कि उन्होने मुझे फेल कर दिया है और शायद इसीलिए ढाढ़स बंधा रहे हैं जिससे मैं अपने असफल ग्रेड को स्वीकार करने में खुद को सक्षम कर पाऊँ। मैंने उन्हें जोरदार शब्दों बताया कि मैं किसी भी सूरत में 'F' स्वीकार नहीं कर सकता और यदि ऐसा हुआ तो उसी शाम को अपने हॉस्टल की छत से कूदकर जान दे दूंगा। मैं आश्चर्यचकित था कि वे मेरी इस धमकी से तनिक भी विचलित नहीं हुए। मेरी आँखें भीगी हुई थीं और मुझे विश्वास नहीं हो रहा था कि आत्महत्या करने की धमकी भी उन्हें विचलित नहीं कर पा रही थी कि वे मुझे पास कर दें। मुझसे वे बार बार पूछ रहे थे कि "मैं क्यों फेल होने से इतना डर रहा हूँ?"

उन्होंने कहा कि "आज ऐसा लग रहा है कि तुम इस कोर्स में किसी भी कीमत में पास होना चाहते हो। लेकिन जरा मेरे बारे में सोचो। मुझे लग रहा है कि तुम नहीं, मैं फेल हुआ हूँ क्योंकि मैं शायद समुचित तरीके से तुमको शिक्षित नहीं कर पाया जिसकी वजह से आज तुम इस परीक्षा में अच्छा नहीं कर पाये। यदि ऐसा है कि तुमने क्लास को मिस किया तो भी ये हमारी ही असफलता है कि मैं इस विषय को तुम्हारे लायक रोचक नहीं बना सका। चन्द्र मोहन, मैं बहुत लंबे समय से अध्यापन-कार्य कर रहा हूँ और मुझे तब बहुत पीड़ा होती है जब किसी विद्यार्थी को फेल करना पड़ता है। लेकिन मैं तुम्हें बताना चाहूँगा कि किसी विद्यार्थी को तब ही फेल करता हूँ जब मेरे पास और कोई विकल्प नहीं होता है। मुझे बहुत बुरा लग रहा है कि तुम इसलिए बहुत परेशान हो क्योंकि तुमको एक विषय में 'F' ग्रेड मिलनेवाला है। मेरा विश्वास करो, आज से दस साल बाद तुमको खुद पर शर्म आएगी जब सोचोगे कि आज के दिन तुम मेरे सामने रो रहे थे और पास कर देने की भीख मांग रहे थे। मेरे बच्चे! जीवन बहुत लंबा है एक ग्रेड के थोड़ा इधर-उधर हो जाने से जीवन में निराशा नहीं पनपनी चाहिए। क्योंकि तुम एक परीक्षा में फेल हो गए इसलिए छत से कूदना चाहते हो ऐसा कभी मत सोचना। और यह भी कभी चिंता मत करो कि लोग क्या कहेंगे? यदि तुम्हें अपनी अंतरात्मा में लगता है कि तुम एक भले इंसान हो तो तुम्हारा जीवन हमेशा खुशहाल रहेगा। निश्चिंत होकर घर जाओ भाई की शादी का भरपूर आनंद लो और ग्रेड की चिंता बिलकुल मत करो। तुम्हें परीक्षाफल का पता चल जाएगा। खुश रहो और अब जाओ।" मैं पूरी तरह से उलझन में था; उन्होने जो भी कहा उसको लेकर मैं किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पा रहा था। इस वार्तालाप के बाद जो कुछ मेरी समझ में आया वो था कि उन्होंने निश्चित रूप से मुझे फेल कर दिया है और अब केवल एक आदर्शवादी की तरह से मुझे केवल सांत्वना दे रहे हैं। दूसरे ही दिन मैंने ट्रेन पकड़ी और अपने घर आ गया।

एक सप्ताह के बाद आई आई टी कानपुर से मेरे दोस्त पीयूष ने फोन पर बताया कि "'F' ग्रेड पानेवालों की सूची चस्पा कर दी गई है और उसमें मेरा नाम नहीं है।" मैं उस विषय में 'D' ग्रेड के साथ पास हो गया था। मैं बहुत ही खुश था क्योंकि मैं शर्मिंदगी झेलने से बच गया था।

मुझे अब भी मशीन की थ्यौरी के बारे में तो कुछ याद नहीं है लेकिन आज लगभग साढ़े आठ वर्ष बीत जाने के बाद भी प्रोफेसर मलिक के कहे हुए वे वाक्य मेरे जेहन में बिलकुल जीवंत हैं और मैं आज यह सोचकर खुश होता हूँ कि मैंने छत से छलांग नहीं लगायी।

चंद्रमोहन ठाकुर, आईएएस
पूर्व छात्र

"मैं मरुथल की माटी हूँ"

मैं मरुथल की माटी हूँ, तुम नदियों का नीर सही,
मैं पड़ा पड़ा सा रहता हूँ, तुम करते नित सैर नई,
मैं बंजर भूमि का नाचीजा टुकड़ा हूँ, तुम जीवन के स्रोत सही,
मैं जुदा-जुदा सा रहता हूँ तुम लोगों के बीच सही।
लेकिन नित सैर-सपाटे करने वाले,
नित जीवन के मजे उठाने वाले,
इक दिन तुझको भी सागर में जाकर नमकीनी बन जाना है,
इक दिन तुझको भी सागर में जाकर सागर का कैदी बन जाना है,
मेरा क्या ?
मैं तो एक समीरी झोके से, लम्बी नहीं तो छोटी दौड़ लगा लूँगा,
मैं तो एक समीरी झोके से, खुद को दुनिया के दीदार करा लूँगा।
पर जब तू सागर में बंद अकेला होएगा,
जब तू सागर में बंद अकेला रोएगा,
तब तू मरुथल का दुख समझेगा,
तब तू मरुथल का सुख समझेगा।

रवि प्रकाश मीणा
छात्र

रेल का इंजन

वह बीस बरस पहले की एक खूबसूरत सी शाम रही होगी। उस छोटे से स्टेशन पर अचानक हलचल सी हुई थी और कुछ लोग रेल की पटरी के पास जाकर, दूर कुछ निहारने से लगे थे, माँ की गोद से एक बच्चा उचक-उचक कर उस दिशा में कुछ देखने का प्रयास कर रहा था।

उसने दूर आसमान पर छिटके सिंदूरी बादलों के पास काले रंग के धुएं का गुबार देखा था। उसने लोगों की आवाजें सुनी! आ रही है! आ रही है! "वह माँ का आँचल अपनी नन्हीं मुट्ठी में जोर से पकड़ लेता है। सीटी की आवाज निरंतर पास आती जा रही थी और एकाएक उसके सामने एक भीमकाय गोल मुँह वाला और काले धुएं उगलता रेल का इंजन तेजी से पटरियों पर भागता हुआ उसके सामने से गुजरा और एक जोरदार "फिस्स्स्स" जैसी आवाज हुई। वह चौंक गया था, शायद उसे डर भी लगा था। तेजी से इंजन के पीछे एक कतार में लगी कुछ गहरे लाल रंग की बोगियाँ उसके सामने आ खड़ी हुई।

लोग तेजी से उसमें चढ़ने लगे और वह डर के मारे चिल्लाने लगा। उसने रोना भी शुरू कर दिया था। परन्तु माँ ने उस पर ध्यान नहीं दिया। उसे बोगी की सीढ़ियों पर चढ़ने और किसी सीट पर बैठने की ज्यादा चिंता थी। उसने कई लोगों का समूह देखा जिन्हें किसी भी प्रकार का भय नहीं था और न ही किसी प्रकार की चिंता, वे सभी एक दूसरे से धक्का मुक्की करते हुए बैठ गये..आमने और सामने। कुछ खिड़कियों के बाहर निहारने लगे थे।

वह खुद ही सिसकते हुए चुप हो गया। उसे लगा कि अब वह सुरमयी सीटी उसी के साथ भागी जा रही है। वह रेल के इंजन को देखना चाहता था। उसे इन बोगियों में कोई दिलचस्पी नहीं थी।

गोधूलि की बेला में आकाश फिर सुनहरा सा हो गया था। बाग के समीप कुछ बच्चे एक दूसरे की कमर पकड़कर रेल-रेल खेल रहे थे। वह मुस्कुरा दिया था। उसे रेल के इंजन की याद हो आई थी और उसके पीछे श्रृंखलाबद्ध लगे डिब्बों की भी। उसने भी रेल वाला खेल खेलना चाहा था लेकिन इंजन बने एक लड़के ने उसे झिड़क दिया। तभी एक लड़की ने उसका हाथ थामा और कहा-आओ, मेरी कमर पकड़कर तुम गार्ड का डिब्बा बन जाओ।

बच्चा उदास हो गया। वह तो रेल का इंजन बनना चाहता था लेकिन लड़की ने उसका हाथ पकड़कर अपनी कमर पर रख लिया और रेल के साथ चल पड़ी थी।

रेल भागती जा रही थी.. बागीचे के पेड़ से लिपटी लताओं के बीच से होते हुए, केले के पेड़ों की झुरमुट से होते हुए..और वह पीछे-पीछे घिसटता और भागता जा रहा था। अचानक बच्चों की रेल रूक गयी। दो पेड़ों के बीच से रेल गुजर रही थी लेकिन आगे एक गहरा गड्ढा था। इंजन बने लड़के ने जोर से आवाज दी-यह रेलगाड़ी आगे नहीं जा सकती..गड्ढा है? क्या करूँ?

लड़की ने घूमकर पीछे बच्चे की तरफ देखा, मानो उसे जताना चाह रही हो कि तुम गार्ड के डिब्बे हो, रेल के इंजन को जबाब दो, लेकिन कुछ सोचकर उसने इंजन बने लड़के को आवाज दी।

सारे डिब्बे को जुड़े रहने दो, लगता है हम इलाहाबाद जंक्शन पर आ गये हैं। इंजन बदलना पड़ेगा।

इंजन बने-लड़के ने जोर से चिल्लाकर पूछा-वो कैसे?

-अरे बुद्धू जब आगे रास्ता नहीं होता तो इंजन वहाँ से खुलकर यहाँ आगे लग जाता है।

-तो क्या मैं वहाँ आगे आ जाऊँ? लड़के ने तेज स्वर में प्रतिप्रश्न किया।

लड़की ने कुछ पल उस बच्चे को देखा और तेजी से कहा-नहीं, तुम वहीं रहो, बस उल्टा घूम जाओ।

सारे बच्चे उल्टी दिशा में घूम गये और लड़की ने बच्चे की कमर पर हाथ रखकर हौले से कान में कहा-अब तुम रेल के इंजन बन गये हो। चलो...! जहाँ भी तुम ले जाना चाहो। बच्चे ने अपनी कमर में एक गुदगुदी सी महसूस की। वह खिलखिला उठा था और मुँह से बोलकर सीटी जैसी आवाज निकाली थी उसने.. और उसकी रेल चल पड़ी थी... छुक-छुक करते हुए... झुरमुटों को पार करते हुए... लालिमा लिए क्षितिज की तरफ... और पीछे धुएं का गुबार उड़ पड़ा था।

मनीष कश्यप
छात्र

अन्यायी कृष्ण

मम्मी अपनी पहले से है,
कृष्णमयी तो हुई बाद में।
कृष्ण बहुत अन्याय कर रहे,
मातृ स्नेह की खड़े राह में।।

मातृ स्नेह केवल अपना है,
कमी नहीं बरदाश्त जरा भी।
अभी समय है हम बच्चों का,
अभी कहाँ मन भरा तनिक भी।।

हम पर सदा स्नेह वर्षा थी,
कहो कृष्ण तुम कहाँ से आए?
लेकर भक्ति माल बेचने,
इस घर में कैसे घुस आए?

यह घुस पैठ नहीं अच्छी है ,
कृष्ण तुम्हें हम भी देखेंगें।
अगर रवैया यही तुम्हारा,
वृन्दावन वापस भेजेंगे।

जन्म तुम्हारा हुआ जेल में,
चोरी की आदत है पाई।
बढ़े बहुत हो तुम शह पाकर,
अच्छी बात नहीं यह भाई।
माखन चोर रहो बस मोहन,
भला तुम्हारा सदा इसी में।
माखन खाओ मौज उड़ाओ
रहो दूर बस स्नेह डगर से।।

दो-दो माँएं मिलीं तुम्हें तो,
हमने तो हिस्सा नहीं बँटाया।
कैसे चालबाज तुम निकले,
मम्मी को ऐसा बहकाया।

देखो अपनी माताओं को,
उनका स्नेह सँभालो अपना।
उनका स्नेह नहीं बँटेगा,
मम्मी का मत देखो सपना।

सिर्फ एक तुम्हारा भाई
हम हैं कई! रहे यह याद।
हम सारे यदि लिपट पड़े तो,
रण-छोड़ जाओगे भाग।

इतिहासी तुम! बड़े भगोड़े,
भेद विश्व को है यह ज्ञात।
दाल तुम्हारी नहीं गलेगी,
व्यर्थ तुम्हारी है हर घात।

अपनी बारी आने तक तुम,
धीरज धरो, करो प्रतीक्षा।
मम्मी अभी हमारी केवल,
भरी नहीं है मेरी इच्छा।

चन्द्रशेखर त्रिवेदी, पूर्व छात्र

एक किताब दिला दे

माँ मुझको एक किताब दिला दे।
उड़ सकूँ मैं परियों के देश में।
एक ऐसा जहाज दिला दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

बैठे-बैठे सैर करूँ पूरे जहाँ की,
देखूँ नजारे, लोग, संस्कृति।
ऐसी मुझे परवाज़ लगा दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

बिसरा कर अपनी सुधि को,
लगाऊँ गोता शब्द-सिन्धु में।
ज्ञान के मोती पाने को मेरी,
एक छोटी–सी प्यास बुझा दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

थाह पाने को निज-अस्तित्व की,
मिटा सकूँ मैं, मैं को अपनी।
सीमित से असीम होने की,
कोई तो जुगत बता दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

क्षीर तेरा है मेरी रग में,
पर नीर दिया जिस धरती ने।
न हो जाऊँ कृपण, स्वार्थों की खातिर,
मुझमें ऐसा संस्कार जगा दे,
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

बचपन बीता माटी खाते,
खेलते, कूदते, पतंग उड़ाते।
यौवन के उन्माद में मुझको,
जमीं पे टिके रहना सिखला दे,
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

जन्मा तो मैं तेरे गर्भ से,
पाया अन्न-जीवन प्रकृति से।
पोषित, पल्लवित हुआ जिस आँगन में,
न करूँ मैला क्षणिक विकास के मद में।
ऐसी कर्तव्य-भावना जगा दे,
री माँ, मुझकों एक किताब दिला दे।

जिस देश की मिट्टी की सुगंध,
करती रही सुवासित तन-मन को हर-क्षण।
मेरे उत्थान में जिसने,
उपलब्ध करवाए अनेकों संसाधन।

राष्ट्र-प्रेम की भावना का,
हृदय में मेरे वास करा दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

सीमाओं के बंधन,
कर न सकें निर्मल-मन दूषित।
इर्ष्या-द्वेष की आँधी से,
व्यष्टि से समष्टि की यात्रा का,
चित्त में प्रादुर्भाव करा दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

कहूँ अल्लाह या करतार,
ऐसे नाम-रूपी चक्रव्यूह से,
मेरी तो अब मुक्ति करा दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

उपनिषदों का घोष,
किस विधि हो मानव का कल्याण।
न कोई भेदभाव प्रकृति में,
जीवन हो केवल कर्म प्रधान।
अकर्मण्यता का विनाश कर,
कर्म-निष्ठ तू मुझे बना दे।
री माँ, मुझको एक किताब दिला दे।

आशीष भटेजा
शोध छात्र

संगीत शिक्षा एवं इसका महत्व

संगीत अभिव्यक्ति के सर्वाधिक प्रभावी माध्यमों में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। संगीत के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इसका विकास मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ हुआ। प्राचीन समय में जब भाषा एवं लिपि का ज्ञान मानव को नहीं था, तब वह अपने विभिन्न भावों को अलग-अलग प्रकार की आवाज निकालकर एवं अपनी आंगिक मुद्राओं के प्रदर्शन से अभिव्यक्त करता था। उस युग में उसे अपने हर्ष, शोक, उत्साह, दुःख आदि भावों को विशिष्ट प्रकार की ध्वनियों के माध्यम से प्रकट करना होता था। यह एक प्रकार से संगीत की पृष्ठभूमि थी जहाँ से संगीत का मानव-जीवन में प्रवेश हुआ। इसके बाद शनैः-शनैः संगीत का विकास होता गया और एक कला के रूप में इसने सर्वोपरि स्थान बनाया। परिवर्तनशील संसार के नियमों को मानते हुए संगीत प्रदर्शन में भी कई बदलाव हुए। आज संगीत कम समय में पूर्ण भाव सम्प्रेषण का सशक्त माध्यम बन गया है।

ऐसा माना जाता है कि संगीत और योग की शिक्षा बच्चों को प्राथमिक स्तर से ही समुचित रूप से दी जानी चाहिए। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधीजी ने यह विचार बहुत पहले ही प्रकट किया था परन्तु, आज हम लोग एक शौक के तौर पर ही इसको सीखते हैं। विद्यालयों में भी यह नहीं बताया जाता कि संगीत का महत्व केवल 15 अगस्त और 26 जनवरी के कार्यक्रमों तक सीमित नहीं है अपितु इसका जीवन के अनुशासन एवं रचनात्मकता में भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। संगीत के द्वारा मनुष्य की प्रकृति-प्रदत्त शक्तियों जैसे कल्पना, एकाग्रता तथा स्मृति का विकास सरलता के साथ किया जा सकता है।

संगीत की शिक्षा सभी बच्चों को प्राथमिक स्तर से देनी चाहिए लेकिन इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि सभी बच्चों को जबरदस्ती मंच पर प्रदर्शन के लिए न कहा जाए। कुछ बच्चे संगीत की अच्छी जानकारी हासिल करके एक अच्छे श्रोता भी बन सकते हैं एवं कुछ बच्चे अलग प्रकार के वाद्य-वादन, जो उस समय विद्यालय में न रहा हो में भी आगे बढ़ सकते हैं। संगीत की समुचित जानकारी होने का मतलब यह नहीं होता कि वह संगीत का अच्छा कलाकार भी हो; परन्तु जहाँ संगीत की समझ मनुष्य के सोचने के तरीके को अच्छा बनाती है वहीं संगीत लोगों के प्रति सहृदय होने में महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाती है। अध्ययन के बाद जब बच्चे संगीत में कुछ समय देते हैं तो उनके दिमाग की थकावट दूर हो जाती है और वे तरोताजा हो कर फिर से उतनी ही लगन के साथ अध्ययन करने में सक्षम हो पाते हैं।

ऐसे बड़े-बड़े विद्वान हुए हैं जिन्होंने संगीत के क्षेत्र में तो कोई नाम नहीं किया परन्तु संगीत की जानकारी एवं समझ ने उनके मन मस्तिष्क पर ऐसा प्रभाव डाला कि वे अपने-अपने क्षेत्र में एक मिसाल कायम कर पाए। जैसे-स्वामी विवेकानंद ध्रुपद गायन एवं पखावज वादन के अच्छे ज्ञाता थे, अल्बर्ट आइन्स्टीन एक अच्छे वायलिन वादक थे, भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ.ए.पी.जे.अब्दुल कलाम एक अच्छे वीणा वादक हैं। इन महान विभूतियों ने संगीत का उपयोग मस्तिष्क की ऊर्जा बढ़ाने में किया।

प्राथमिक स्तर पर बच्चों को संगीत-शिक्षा देने में बहुत ही सावधानी बरतनी चाहिए। बच्चों को सिखाए जाने वाले गीत का साहित्य उनके स्तर का होना चाहिए एवं केवल कार्यक्रमों को ही ध्यान में रख कर गीत न सिखाए जाएं अपितु छोटी-छोटी कविताओं को स्वरलिपिबद्ध कर उनको सिखाया जाए ताकि वे

रुचिकर हों। कहा भी जाता है, जो रुचेगा वही पचेगा। बाल्यकाल में रुचि धीरे-धीरे बढ़ती भी है और परिवर्तनशील भी होती है। कुछ बच्चों को प्रारंभ में संगीत के प्रति रुचि नहीं होती परन्तु उचित सांगीतिक माहौल देने से एवं सही दिशा निर्देश से वही बच्चा धीरे-धीरे रुचि लेने लगता है, लेकिन इसके लिए धैर्य की आवश्यकता होती है ।

सांगीतिक रुचि आने के बाद बच्चे की प्रतिभा एवं क्षमता को देखते हुए शिक्षक एवं बच्चे के माता-पिता को आपस में बातचीत कर उसके सांगीतिक विषय का चुनाव करना चाहिए। कोई बच्चा गायन में अधिक क्षमता रखता है तो कोई किसी विशेष वाद्य में अपना कला-कौशल दिखा सकता है । माता पिता को बिना क्षमता का आकलन करे ही बच्चे पर संगीत सीखने का दबाव नहीं बनाना चाहिए।

कुछ बच्चे शुरू में संगीत के प्रति अरुचि दिखाते हैं लेकिन कुछ वर्षों के बाद उनमे अचानक से संगीत के प्रति रुचि बढ़ने लगती है। इसलिए अच्छा संगीत सदैव बच्चों को समय-समय पर सुनवाते रहना चाहिए ताकि ऐसा न हो कि जब तक सही समय आए, तब तक देर हो चुकी हो। अधिकांशतः ऐसा देखने को मिलता है कि लोगों की संगीत के प्रति रुचि तो बहुत होती है पर वो संगीत में कुछ कर नहीं पाते क्योंकि उनको उचित माहौल एवं सही मार्गदर्शन नहीं प्राप्त हो पाता।

किशोरावस्था में बच्चों को अभ्यास के महत्व के बारे में समुचित रूप से समझाना चाहिए क्योंकि यही अवस्था कला के निखार की पृष्ठभूमि होती है। यह सर्वविदित है कि स्वर साम्राज्ञी लता मंगेशकर जी ने अपना पहला गाना 13 वर्ष की आयु में सन 1942 में रिकॉर्ड करवाया था। इसी तरह अनेक संगीतज्ञों ने इसी अवस्था में सतत् अभ्यास करके अपने कला-कौशल का परिचय दिया है। संगीत ही क्या, अन्य क्षेत्रों में भी 13 वर्ष से 19 वर्ष की उम्र के बीच अच्छी लगन एवं अभ्यास से निश्चित सफलता मिलती है, ऐसा महान लोगों के जीवन परिचय से ज्ञात होता है। युवावस्था में युवाओं को यह समझना चाहिए कि संगीत में क्रेश-कोर्स नाम की चीज़ नहीं होती, केवल समुचित अभ्यास एवं उचित मार्गदर्शन ही इसमें सफलता के द्वार खोल सकते हैं। अगर कोई यह कहे कि वह 2 महीने में अमुक वाद्य बजाना सिखा देगा तो उस अंतराल में जो तीन चार गीत उसने सिखाए होंगे विद्यार्थी केवल उन्ही गीतों को थोड़ा- थोड़ा बजा पाएगा, उसके आगे एक भी नहीं। इसलिए संगीत बड़े धैर्य और लगन के साथ सीखने-सिखाने वाली विद्या है।

विचार करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि संगीत एक साधना है, एक आराधना है, नाद ब्रह्म की उपासना है तथा उचित मार्गदर्शन एवं सतत् अभ्यास के अतिरिक्त इसका कोई दूसरा विकल्प नहीं है।

देवानंद पाठक
सामुदायिक रेडियो केन्द्र

झूठ नहीं लिख पाता हूँ।

कविता के मंदिर तक आकर, बाहर ही रुक जाता हूँ।
सच को लिखना कठिन बहुत है, झूठ नहीं लिख पाता हूँ।
जीवन की नश्वरता को मैं,
शाश्वत स्वर कैसे कहता?
दो दिन जहाँ ठहरना, उसको
अपना घर कैसे कहता?

भावों के निर्बन्ध गगन को,
शब्द सीप में क्या भरता?
मन के दिव्य प्रेम का गायन,
करता तो कैसे करता?

वह अगेय रह जाता पीछे, मैं कितना भी गाता हूँ।
सच को लिखना कठिन बहुत है, झूठ नहीं लिख पाता हूँ।

चंदन माला पर क्या लिखना,
देवालय जब सूना हो।
भीतर हृदय अछूता, ऊपर,
ऊपर तन को छूना हो।

मृण्मय काया से चिन्मय का,
संभव है कैसे अर्चन?
जो अरूप का रूप दिखा दे,
ऐसा भी क्या है दर्पण?

अगणित प्रश्न उठा करते हैं मैं कितने भी सुलझाता हूँ।
सच को लिखना कठिन बहुत है, झूठ नहीं लिख पाता हूँ।

सागर मंथन से आता है,
अमृत संग गरल भी तो।
एक साथ ही जीवन है यों,
मुश्किल और सरल भी तो।
वरें एक को तजें एक को,
खंडित जीवन दृष्टि सदा।
नहीं जगत में कभी किसी पर,
होती सुख की वृष्टि सदा।

साथ अंधेरा भी रहता है, कितने दीप जलाता हूँ।
सच को लिखना कठिन बहुत है, झूठ नहीं लिख पाता हूँ।

रवि पाण्डे
शोध छात्र

ऐ मन मेरे

ऐ मन मेरे तू क्यूँ इतना अधीर, इतना चंचल है,
घड़ी की सुइयों से भी निरंतर, हवाओं से भी तेज, बिजली से भी चपल!
बिन लगाम के घोड़े सा भागता जाता है तू, क्यूँ नहीं सुनता कहना मेरा,
डर है मुझे रफ्तार से तेरी, कहीं ठोकर न लगे तुझे और तू बिखर ना जाएँ कहीं!
मेरे मासूम सपनों की डोर ना छूटे तुझसे,
जिंदगी मेरी कहीं ना रूठे मुझसे,
तू ही तो है जिसने भरोसा दिया मुझे हर कदम पर,
हौसला मिला है मुझे तुझी से
हर नाक़ाम सी लगने वाली कोशिश तूने ही तो सच की है!
पर अब बस, अब संभल जा तू, रूक जा कहीं,
ठहर कहीं, एक शांत गहरे समुन्दर की गहराइयों में खो जा कहीं,
ऐ मन मेरे पल दो पल सो जा कहीं!

सीमा यादव
कनिष्ठ सहायक

संबंधों का भार संभाले बैठे हैं

दिखने में जो प्यार संभाले बैठे हैं,
अंदर से अंगार सम्हाले बैठे हैं।

सच तो ये है, सच से है इंकार हमें,
हम झूठा व्यापार सम्हाले बैठे हैं।

छोटे-छोटे सुख के खातिर हम,
दुखों का अंबार सम्हाले बैठे हैं।

एक खबर आई थी कल खुशहाली की,
अब तक तो अखबार सम्हाले बैठे हैं।

बेटों ने जायदाद लुटा दी लेकिन,
पुरखों की तलवार सम्हाले बैठे हैं।

अब मीठा एहसास कहाँ है रिश्तों में,
संबंधों का भार सम्हाले बैठे हैं।

रंजना सुनील श्रीवास्तव
कनिष्ठ सहायक, परियोजना

पैराशूट

कुछ सौ मीटर की ऊँचाई से
नीचे देखा तो
कंक्रीट के जंगल थे
भूरे-भूरे से;
मटमैले स्लेटी से;
हरियाली! दुबकी बैठी थी
एक कोने में;
डांट पड़ी हो कसकर मानों
या कोई ढूँढ रहा हो कातिल!
जिसकी शातिर नज़रों से बचती
बैठी है छुपकर।
मैं लैंड हुआ;
जाकर देखा;
क्या हालत थी हरियाली की!
पर वो ना मौजूद!
ऊपर से तो दिखती थी!
छूपी-छुपी सी थी लेकिन!
दिखनी तो चाहिए थी। कहाँ गई?
क्या इतना जल्दी कंकरीट में बदल गयी?
कुछ सौ मीटर दूर की हकीकत
नज़दीक से गायब !
पता चला कि -
- शहर हमारा
क्लीन सिटी है, ग्रीन सिटी है
अब दूर से ही
प्लास्टिक की सिंथेटिक हरियाली से
कचरे की बदबू आती थी ।

-निशांत सिंह
छात्र

चंदामामा दूर के...

मैं घर के आँगन में झूलता दुधमुँहे लल्ला का पालना हूँ। अकेलेपन से उकताया तो मन हुआ कि कुछ बातें करूँ। मगर किससे? लल्ला सो गया है। आया टी वी देख रही है। मैडम ब्यूटीपार्लर गई हैं। साहब जरूरी मीटिंग में गए। माताजी पड़ोसन की बहू का किस्सा सुनने गई हैं। बाबूजी होमयोपैथी की दवा लेने गये हैं।

मैं तो मन को समझा लेता हूँ। जानता हूँ, किसी के पास वक्त नहीं है। मगर बेचारा लल्ला क्या जाने? जब तक घर में चहल-पहल रहती है, उसकी भी किलकारियाँ गूँजती है, जब कोई दिखाई नहीं देता तब वो भी हाथ-पाँव पटकने लगता है। आया दोपहर के सीरियल क्यों छोड़े? डिस्टर्ब होती है तो खिसियाती है। इधर लल्ला ने रुआँसा मुँह बनाया नहीं कि उसने दूध की बॉटल मुँह में ठूँस दी।

खैर, मैं तो चलो सठिया गया हूँ। आज के दौर को क्या समझूँ, क्या जानूँ? झुर्रियों ने चेहरे को ढ़क दिया है। नजर कमजोर हो गई है, सुनाई भी कम देता है। मगर एक वक्त था जब मेरी भी सूरत माता जी की नई धोती से मिलती थी। गाँव का घर बड़ा सा आँगन और आँगन में अम्बुआ का घना सा पेड़ था। मैं एक डाली में लटक जाता था और साहब मेरी गोद में अंगूठा चूसा करते थे। साँझ-सबेरे रोटी चूल्हे पर सिंकती थी। कंडे का धुआँ, फुकनी-चिमटा, चौका-बासन के बीच भी माताजी डाली से बंधा पालना डुला जाती थीं। बाबूजी भी कहीं से लौट के आएं, हाथ मुँह बाद में धोते थे, पालने में पुचकार पहले लगाते थे। दूध की बोतल तो शहर में आकर देखी है हमने, पाउडर-दूध भी यहीं आकर जाना। हमारे जमाने में तो सब देशी हिसाब था। बच्चे को आँचल में छिपाया जरा देर थपकी दी और जैसे अमृतधार ने तृप्त कर दिया हो, बच्चा चैन की नींद सो जाता था। आजकल गुपचुप बातें भी मेरे ही इर्द-गिर्द होती हैं तो सुन लेता हूँ। कहते हैं बच्चे को अपना दूध पिलाओ तो फिगर बिगड़ता है। ज्यादा तो नहीं समझता हूँ लेकिन फिगर का मतलब सुन्दरता है इतना तो शहर में आकर जानने लगा हूँ। यूँ तो मैडम भले ही बुरा मान जाएं पर मुझे माताजी आज भी सुंदर लगती हैं।

बचपन में साहब को गोद में खिलाते बाबूजी को देखते ही बनता था। इतनी तरह के चेहरे और इतनी आवाजें निकालते थे वे कि कभी-कभी माताजी कह उठती थीं कि बच्चे को खिला रहे हो कि डरा रहे हो, और फिर बाप और बेटे दोनों की नजर उतारनी पड़ती थी।

कभी-कभी सोचता हूँ इतनी मशीनें तो दुनिया में बन गईं एक ऐसी मशीन और बन जाती जिसमें बच्चे को रख दिया जाता और बटन चालू करते ही ममता, प्यार, दुलार, थपकी, लोरी सब बच्चो को मिलने लगता। फिर मैडम ब्यूटीपार्लर से चाहे जब लौटतीं, साहब मीटिंग का मंडप उखाड़कर ही आते, माताजी भी पड़ोस की सास-बहू का झगड़ा सुलझा लेतीं और तब आतीं और बाबूजी बेचारे दवा लेकर सत्संग करने चले जाते।

शायद फिर मैं भी इतनी घुटन न महसूस करता। एक वक्त था जब कभी मस्त हवा में डाली से लटक कर झूलता रहता था एक वक्त अब ये है कि शहर आया तो संगमरमर की दीवारों में कैद होकर रह गया। दोनों हाथ लोहे की जंजीरों से बाँधकर मुझे लटका दिया गया। भूले भटके कोई हवा का झोंका आ गया तो हलक से चीं-चूं की मरियल सी आवाज़ निकल जाती है। अबोध लल्ला समझता है कि मैं लोरी गा रहा हूँ चंदामामा दूर के पुए पकाएं बूर के...

ओमप्रकाश शर्मा
सामुदायिक रेडियो केन्द्र

सारा रास्ता

उम्मीदों के आइने में कुछ अलग निकला
हर दिल अज़ीज़ शख्स मुसाफ़िर निकला

गलत उम्मीद थी अब साथ नहीं छूटेंगे
समझ रहे थे जिसे घर वह कारवां निकला

चले थे किस मक़ाम को पहुँच गए हैं कहाँ
सफ़र समझे थे पर मक़ाम भी वही निकला

किसको उनवान कहें कहाँ शुरू नज़्म करें
मसला एक, सवालों का सिलसिला निकला

मुड़कर देखी जो जिन्दगी अपनी हमने
उसी के भेष में सारा यह रास्ता निकला

अरुण श्रीवास्तव
पूर्व छात्र

सांत्वना : सेमेस्टर समाप्ति पर

मैने कई दफा प्यार करने की कोशिश की
कई लोगों से
कई तरह से
कभी खुली किताब की तरह
बेपर्द, बेबाक और बिना किसी लाग लपेट के
कभी बंद मुट्ठी की तरह
पूरी ताकत और गर्माहट के साथ
कभी बाजार की तरह
उपहारों और अवसरों से लबरेज़
पर
कभी तुम्हारी उम्मीदों और शर्तों पर खरा नहीं उतर पाया
भूल गया था मैं कि खुली किताब, बंद मुट्ठी और बाजार कभी उम्मीदों
और शर्तों पर नहीं जीते
इस बार माफ करना प्रिये
अगली बार कोई और तरीका ढूढूँगा तुम्हें बेइंतहाँ प्यार करने के
लिए!!!

विकास दूबे,
शोध छात्र

श्याम रंग

खग वृंद करें छंद, पवन है मंद मंद
आज मेरी वाटिका तरंग में नहाई है
पुष्प संग झूम रही, लिए मन मकरंद
भ्रमर का नाद सुन कली मुसकाई है
मन की उमंग देख, परवश तरंग देख
आज मेरी कविता प्रथम लजाई है।

टेसुओं में पड़े रंग, नयी रश्मियों के संग
सप्तरंग फागुन ने ली अंगडाई है
कोयल है कूक रही, पत्र-पत्र उन्मत्त
बड़, आम, नीम, शाख-शाख बौराई है
चढ़ा ज्यों ही श्याम रंग, राधिका के अंग-अंग
श्यामा बन बंसी के संग इठलाई है।

राधा देखे चंहु ओर, कौन है ये चित-चोर
कान्हा ने प्रथम आज बंसी बजायी है
उर को टटोल रही, मधु-रस घोल रही
प्रेम की ये कैसी आज अगन लगाई है
सूर-रसखान भले पृथक हैं पंथ इनके
किन्तु दोनों की बंसी ने प्रेम-धुन ही गाई है

प्रेम-हार, रस-रंग, कोमल स्पर्श संग
आज कोई रूपसी मन में समाई है
हृदय हुआ विहंग, अंग-अंग चढ़ी भंग
मचल-मचल उठी कैसी तरुणाई है
रंग, रूप यौवन हैं छिपे अंग-अंग जैसे
आज मेरी कविता श्रृंगार कर आयी है।

सोमनाथ डनायक
कनिष्ठ तकनीकी अधीक्षक

भारतीय प्रगति के विरोधाभास

मैंने लगभग चालीस वर्ष पूर्व भारत छोड़ा था। यद्यपि मैं हर तीन-चार वर्ष के बाद भारत आता रहा हूँ, लेकिन बहुत थोड़ी अवधि 5-6 सप्ताह के लिए। यह पहला अवसर है जब मैंने लगातार एक वर्ष भारत (आईआईटी) में बिताया। मैं भारत के विषय में पढ़ता रहा हूँ और सुनता रहा हूँ, लेकिन लगातार एक वर्ष रहने के बाद एक विशेष अनुभव हुआ है। वैसे तो आईआईटी कैम्पस के अन्दर रहने पर ठीक से आभास नहीं होता कि मैं भारत में हूँ, फिर भी मेरा प्रयास रहा है कि मैं कुछ ग्रामीण क्षेत्रों और नगरों का भ्रमण कर पुन: अनुभव कर सकूँ कि भारत कितना बदल गया है? कितनी प्रगति हो गयी है? लोग कितने बदल गये हैं?लोगों के रहने और सोचने के ढ़ंग कितने बदल गये हैं?

मैं इस निबंध में प्रगति के चार पहलुओं पर प्रकाश डालना चाहूँगा, भौतिक-आर्थिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, शिक्षा और स्वास्थ्य। मैं प्रारंभ में ही कह देना चाहता हूँ कि यह निबन्ध वैज्ञानिक तथ्यों के ऊपर आधारित नहीं है, यह कुछ सामान्य उपाख्यानों और छोटी-छोटी घटनाओं से उपजी धारणाओं के ऊपर आधारित है। इसलिए यदि इस निबंध को एक कहानी समझकर पढ़ा जाये, तो अधिक उपयुक्त होगा।

पिछले लगभग बीस वर्षों में आर्थिक और भौतिक स्तर पर भारत बहुत आगे बढ़ा है। बड़ी-बड़ी इमारतें, बड़े-बड़े शॉपिंग मॉल्स, फ्लाईओवर, चौराहों पर बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ और बड़े-बड़े लोगों के बड़े-बड़े पोस्टर। किसी जमाने में सिनेमा स्टार्स के पोस्टर्स दिखाई देते थे, आज राजनेताओं और समाज सेवकों के पोस्टर्स दिखाई देते है। कोई मंत्री नए वर्ष की शुभकामनाएं दे रहा है, किसी राजनेता की पचासवीं या साठवीं वर्षगांठ पर बधाईयाँ दी जा रही हैं, कोई जनता को दीपावली या ईद की शुभकामनायें दे रहा है, तो किसी को मंत्री पद या अध्यक्ष पद मिलने पर बधाइयाँ दी जा रही हैं। चौराहों पर स्थापित भव्य मूर्तियाँ भी आकर्षण का केन्द्र बन गयी हैं। किसी जमाने में मृतक राजनेताओं और समाज सेवकों की मूर्तियाँ दिखाई देती थीं, आज जीवित लोगों की भी मूर्तियाँ दिखाई देती हैं।

सड़कें कारों और मोटर साइकिलों से भरी पड़ी हैं। साइकिल रिक्शा तो कहीं-कहीं दिखाई देते हैं, कोलकाता जैसे महानगर में हाथ से खींचे जाने वाले रिक्शे आज भी दिखाई देते हैं, लेकिन तांगे-इक्के तो लगभग गायब ही हो गये हैं। चारो तरफ होंडा, टोयोटा, हुंडई, फोर्ड और शेवरलेट कारें दिखाई देती हैं। एक छोटी सी बस्ती में गया, जिससे मैं अच्छी तरह से परिचित हूँ, तो वहाँ बहुत समृद्धि दिखाई दी।

इतनी कारें हो गई हैं कि सड़कों का बुरा हाल है। सड़कें टूटी-फूटी हैं, गड्ढे हैं। कुछ सड़कें तो इतनी संकरी हैं कि कारों का जाम लग जाता है और ट्रैफिक घंटों तक एक जगह पर थम सा जाता है। यहाँ तक कि लोग अपनी कारों से उतरकर गाली गलौज करते हुए दिखाई देते हैं। एक जाने पहचाने शहर में मैंने देखा कि पूरी सड़क कई किलोमीटर तक खोद दी गयी है, चार वर्ष पूर्व जब मैं भारत आया था तब भी वह सड़क उसी हालत में थी। यदि बरसात हो गई तो उस सड़क पर चलना दूभर हो जायेगा। कारें तो कई वर्षों से उस पर नहीं चली होंगी और फिर ट्रैफिक इतना बढ़ गया है कि बेचारी सड़कों का क्या दोष? कहीं-कहीं तो ट्रैफिक की अधिकता से नव-निर्मित पुल भी उनका भार नहीं संभाल पाते।

अधिकतर लोगों के पास कारें या मोटर साइकिल हैं। बात-बात में पता लगा कि लगभग अस्सी प्रतिशत कारें या मोटरसाइकिल लोगों को दहेज में मिली हुई हैं।

आर्थिक विकास, आधुनिकीकरण और पश्चिमीकरण का प्रभाव जीवन के हर अंग में झलकता है। मैकडोनल्ड, पीजा-हट, टॉमी हिलफिगर, पोलो, अंग्रेजी शराब और ठंड़ी बीयर की दुकाने दिखाई देने लगी हैं। समाज का एक हिस्सा बहुत ही समृद्धिशाली और आधुनिक हो गया है। जिन सरकारी कर्मचारियों को पचास वर्ष पूर्व एक हजार रुपये प्रतिमाह वेतन मिलते थे, उन्हीं पदों पर काम करने वाले लोगों को आज पचास हजार रुपये मिल रहे हैं-पचास गुना वृद्धि। किन्ही-किन्ही पदों पर सौ गुने की बढ़ोत्तरी हुई है। छोटे पदों पर काम करने वालों की आर्थिक हालत में भी सुधार आया है। पचास वर्ष पूर्व एक चौकीदार सौ रुपए प्रतिमाह पाता था, आज एक चौकीदार को पाँच हजार रुपये प्रतिमाह मिलते हैं। मैं एक बर्तन साफ करने वाली महिला से बात कर रहा था। वह चार घरों में सुबह शाम काम करती है, घर की सफाई भी करती है। उसे प्रति परिवार से तीन-चार सौ रुपए प्रतिमाह मिलते हैं, कभी कदाचित उसके बच्चों के लिए पुराने कपड़े मिल जाते हैं, कुछ खाने-पीने को भी मिल जाता है। चार वर्ष पूर्व भी उसे इतना ही मिलता था। मेरे एक मित्र कह रहे थे कि इतना देने पर भी नौकर नहीं मिलते, नौकरों की आदतें बिगड़ गई हैं। मेरे एक अन्य मित्र हैं जिनकी मासिक आय लगभग एक लाख रुपए है। उन्हें अपनी कार चलाने के लिए ड्राइवर की तलाश है तीन हजार रुपए प्रतिमाह वेतन देना चाहते हैं, लेकिन कोई मिलता ही नहीं, लगता है कि कम वेतन पर काम करने वाले लोगों की कमी हो गयी है।

भौतिक विकास का एक विशेष लक्षण यह भी है कि अधिकतर लोग अपने को समृद्ध बनाने के लिये शार्ट-कट रास्ता अपनाने लगे हैं। लोग कम से कम समय में करोड़पति बनना चाहते हैं। ऐसी नौकरी कीजिए, ऐसा व्यवसाय खोजिये, ऐसे लोगों से मित्रता कीजिए, जो रातों-रात, करोड़पति बना दे। सभी कर रहे हैं-विधायक कर रहे है, मंत्री कर रहे हैं, उच्च अधिकारी कर रहे हैं, छोटे अधिकारी कर रहे हैं, शिक्षक कर रहे हैं। सीधा रास्ता तो बहुत लम्बा है, करोड़पति बनने में पूरा जीवन लग जायेगा। जब से मैं भारत आया हूँ, प्रतिदिन कोई न कोई शार्ट कट रास्ते का समाचार सुनाई देता है। कोई कोलगेट से, कोई रेलगेट से, कोई कामनवेल्थ गेट से, कोई हेल्थ गेट से और कोई टू-जी गेट से प्रवेश कर रहा है अपनी मंजिल करोड़पति बनने की ओर।

बहुत ऊँचे लोग-यहाँ तक कि मंत्रीगण इस रास्ते को अपना रहे हैं। परिणाम स्वरूप कई मंत्री जेल में हैं, तो कई जेल जाने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। यह भारत के लिए कोई नयी बात नहीं है। पचास वर्ष पूर्व भी ऐसा होता था। रेलवे रिजर्वेशन के

लिए सुविधा शुल्क, पासपोर्ट बनावाने के लिये सुविधा-शुल्क, कोर्ट का फैसला अपने हित में कराने के लिए सुविधा-शुल्क, तबादला करवाने के लिये सुविधा-शुल्क, तबादला रुकवाने के लिये सुविधा-शुल्क और प्रमोशन करवाने के लिए सुविधा-शुल्क। लेकिन जहाँ पहले हजारों की बातें होती थीं, अब लाखों और करोड़ो की बातें होती हैं। लगता है भ्रष्टाचार हमारे चरित्र का अंग बनता चला जा रहा है। लगभग चालीस वर्ष पूर्व जब मैं अमेरिका के एक विश्वविद्यालय में छात्र था, किसी प्रोफेसर ने इसी प्रकार की टिपण्णी की थी। उसने कहा था कि दंभ और भ्रष्टाचार भारतीय चरित्र का एक अंग है। कुछ भारतीय विद्यार्थियों ने बड़ा हंगामा किया और उस प्रोफेसर को क्षमा मांगने पर मजबूर कर दिया। अब तो भारतीय विद्यार्थियों के मस्तिष्क में ऐसी टिप्पणी के विरोध में विचार भी शायद ही आयेगा।

लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं कि सभी लोग भौतिकता में पूरी तरह लिप्त हो गये हैं। मुझे ऐसा लगता है कि आधुनिकीकरण और पश्चिमीकरण के साथ लोग अधिक धार्मिक और आध्यात्मिक भी हो गये हैं। जगह-जगह हवन कराये जा रहे है-कभी पानी बरसाने के लिये, कभी चुनाव जीतने के लिये और कभी क्रिकेट का मैच जीतने के लिये। मंदिरों में भीड़ बढ़ गयी है, मस्तिष्क पर बड़ा टीका या विभूति लगाने वालों की संख्या बढ़ गयी है-बुद्धिजीवी लोगों में भी। एक सुबह मैं एक मित्र से मिलने गया, जो समाज विज्ञान के प्रोफेसर हैं। दरवाजा खटखटाया तो एक दस-बारह वर्ष की लड़की ने अन्दर आने को कहा और बैठाया। उसने बताया कि प्रोफेसर साहब पूजा पर बैठे हैं। मैं सुन सकता था-जोर-जोर से संस्कृत के श्लोक पढ़े जा रहे थे। लगभग बीस मिनट के बाद वे मित्र धोती-कुर्ते में, माथे पर बड़ा सा टीका लगाये और हाथ में प्रसाद लिये हुए पूजाघर से बाहर आये, मुझे भी प्रसाद दिया।

मैंने सोचा कि शायद आयु बढ़ने के साथ मित्र का धार्मिक विश्वास बढ गया है। लेकिन उनकी पूजा समाप्त होते ही उनका इंजीनियर पुत्र धोती-कुरते में पूजा करने चला गया। यह कोई अनोखा, अनूठा या न्यारा उदाहरण नहीं हैं। ऐसे लोगों की संख्या बढ़ी हुयी लगती है। मैं कई ऐसे वैज्ञानिक, इंजीनियर, डॉक्टर या उच्च अधिकारियों से मिला हूँ जो बिना शुभ घड़ी देखे किसी लम्बी यात्रा पर नहीं निकलते, मंगल को दाढ़ी नहीं बनाते या शनिवार को लोहे का सामान नहीं खरीदते। सबका एक ही राग है।

एक इंजीनियर मित्र तो कहते नहीं थकते कि जो भी भाग्य में लिखा है, उसमें कोई भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता। फिर भी उन्होंने कई रगं-बिरंगी अंगूठियाँ पहन रखी हैं। कोई शनि से रक्षा करता है तो कोई अन्य ग्रहों के कोप से। एक अन्य सिविल इंजीनियर से मिला, जिन्होंने अभी कुछ वर्षों पहले एक भव्य मकान बनवाया था। उस मकान का दरवाजा दक्षिण दिशा की ओर खुलता है। कई पंडितों और ज्योतिषाचार्यों के पास गये, तरह-तरह के उपाय किये, पूजा-पाठ करवाये। वे वास्तुशास्त्र की विधियों से बहुत ही प्रभावित थे और अपने मकान में तरह-तरह के परिवर्तन करवाये। एक अन्य उच्च अधिकारी मित्र से मिला जिनकी ऊपरी आमदनी उनके वेतन से कई गुना अधिक हैं। वे और उनकी पत्नी बहुत ही धार्मिक हैं, तरह-तरह के पूजा-पाठ, यज्ञ आदि कराते रहते हैं। एक अन्य प्रोफेसर मित्र से मिला जो थोड़े परेशान दिखाई दे रहे थे। वे और उनकी पत्नी काफी उच्च शिक्षा प्राप्त किये हुये हैं।

उनका विश्वास है कि जब से उनकी बहू घर में आयी है, उनकी परेशानियाँ बढ़ गयी हैं। उसके आने के शीघ्र बाद उनके परिवार में किसी का देहान्त हो गया, परिवार का एक अन्य सदस्य दुर्घटना ग्रस्त हो गया, और उनके पुत्र की नौकरी में समस्याएं आने लगीं। उनका कहना है कि यह उनका वहम् नहीं है, कई पंडितों और ज्योतिषाचार्यों ने भी उसकी पुष्टि की है।

शिक्षा के क्षेत्र में बहुत परिवर्तन आया है। जगह-जगह तरह-तरह के विद्यालय खुल गये हैं। कहीं इंजीनियरिंग इंस्टीट्यूट, कहीं बिजनेस स्कूल, कहीं कम्प्यूटर प्रशिक्षण केन्द्र। जिन बस्तियों में हाईस्कूल नहीं हुआ करते थे, वहाँ बड़े-बड़े पोस्टग्रेजुएट कॉलेज खुल गये हैं। छोटे-छोटे बच्चों के अंग्रेजी स्कूलों की भरमार हो गयी है। स्कूलों के नाम भी अंग्रेजी में हैं-वुडबाइन पब्लिक स्कूल,सन शाइन इंग्लिश मीडियम स्कूल, लिटिल फ्लावर एकेडमी, यूरो-इंडियन कोचिंग सेंटर। स्कूल खोलना एक अच्छा व्यापार बन गया है, जिससे सभी का लाभ है। व्यापारियों या पैसे वाले लोगों के काले धन का उचित उपयोग हो रहा है और उन्हें अच्छी आमदनी भी हो रही है। बच्चों को भी लाभ हुआ है, जिन्हें स्कूल में प्रवेश पाना कठिन था, उन्हें आसानी हो गयी है। यदि पर्याप्त धन हो तो अच्छे स्कूलों में प्रवेश लेना कोई कठिन बात नहीं है। जो पाँच सौ रुपए प्रतिमाह दे सकते हैं, उनके लिए एक तरह के विद्यालय हैं और जो लोग पाँच हजार रुपए प्रतिमाह दे सकते हैं, उनके लिए अलग विद्यालय हैं।

स्कूलों से अभिभावकों को भी आसानी हुई है क्योंकि उन्हें अब जगह-जगह बच्चों को प्रवेश कराने की झंझट का सामना नहीं करना पड़ता। अध्यापकों को भी लाभ हुआ है उनकी बेरोजगारी कम हुई है। कितने ही युवक और युवतियाँ पोस्टग्रेजुएट शिक्षा पाने के बाद भी नौकरी के लिए धक्के खाते हैं, लेकिन अब उन्हें किसी प्राइवेट विद्यालय में चार-पाँच हजार रुपये प्रति माह मिल ही जाता है। एक लड़की ने लगभग तीन वर्ष पूर्व केमिस्ट्री में डॉक्टरेट की उपाधि पाई, उसे आज कल पन्द्रह हजार रुपये प्रतिमाह मिलते हैं एक लेक्चरर की पोजीशन पर। एक अन्य युवती ने अभी थोड़े दिन पहले हिंदी साहित्य में पीएच. डी. किया। उसे किसी विद्यालय में बी. ए. के विद्यार्थियों को पढ़ाने की नौकरी मिल गयी है और सात हजार वेतन मिलता है। वह बहुत ही खुश है क्योंकि उसे बेकार नहीं बैठना पड़ा। वह इस आशा में खुश है कि यदि उसे किसी राजकीय विद्यालय में नौकरी मिल गयी तो पचास-साठ हजार रुपये मिलने लगेंगे। एक अन्य युवक ने एम.ए. और बी.एड. किया हुआ है। उसने एक विद्यालय को चार लाख रुपये दान दिया और अब उसे चार हजार रुपए प्रतिमाह वेतन मिलने लगा है।

छोटे-छोटे बच्चों को भी बहुत लाभ हुआ है। वे अब अंग्रेजी वेश-भूषा में पढ़ने जाते हैं। छोटे-छोटे 6-7 वर्ष के बच्चे नीली पैंट, सफेद कमीज और लाल टाई पहनकर स्कूल जाते हुए दिखाई देते हैं। अंग्रेजी में बातें करते हैं,

अंग्रेजी ढ़ंग का खाना खाते हैं और अंग्रेजी के टेलीविजन कार्टून देखते हैं। जिन बच्चों के माँ-बाप अंग्रेजी स्कूलों की फीस नहीं दे सकते, वे अपने बच्चों को सरकारी विद्यालयों में भेजते हैं, जहाँ उन्हें मिड-डे मील भी मिलता है। एक ग्राम प्रधान के अनुसार इससे बच्चों को बहुत लाभ हुआ है।

लड़कियों की शिक्षा में भी बहुत प्रगति हुई है। अब गाँवों में भी ग्रेजुएट और पोस्ट ग्रेजुएट लड़कियाँ अच्छी संख्या में मिल जाएंगी। लेकिन माँ-बाप के लिए बहुत सी मुसीबतें बढ़ गई हैं क्योंकि उनकी उच्च शिक्षा-प्राप्त पुत्रियों को योग्य वर नहीं मिल पा रहे हैं। ऊँची शिक्षा-प्राप्त किये लड़कों का भाव बहुत बढ़ गया है। एक साधारण बी.ए. किया हुआ लड़का जो किसी कार्यालय में क्लर्क का काम करता है उसके घर वाले तीन-चार लाख के नीचे बात ही नहीं करते। यदि इंजीनियर, पी.सी.एस. या डॉक्टर हुआ तो बात ही मत पूछिये- उसका भाव 15-20 लाख से ऊपर जाता है। यदि किसी अन्तर्राष्ट्रीय फर्म में इंजीनियर है तो उसका भाव 50 लाख से ऊपर जा सकता है। अभी थोड़े दिन पहले एक मित्र से मिला, जिनकी पुत्री भारत के बहुत प्रसिद्ध विश्वविद्यालय में पी-एच.डी कर रही है। उसके विवाह के लिए किसी डिग्री कॉलेज का अध्यापक पन्द्रह लाख रुपये की माँग कर रहा है। लड़के अपने विवाह की बात नहीं करना चाहते, सब कुछ अपने माँ-बाप के ऊपर टाल देते हैं जो मोलभाव करने में बिल्कुल नहीं शर्माते। बेचारे पी.सी.एस. या डॉक्टरेट किये हुए युवक अपने माँ-बाप को दुखी नहीं करना चाहते और उनके मोलभाव में कोई हस्तक्षेप नहीं करते।

मेडिकल और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी भारत बहुत आगे हो गया है। जगह-जगह अस्पताल, नर्सिंगहोम, मेडिकल क्लीनिक और पैथालॉजी केन्द्र दिखाई देते हैं। डॉक्टरों की भरमार हो गयी है जिनकी बड़ी-बड़ी डिग्रियाँ हैं। दवाओं का अभाव नहीं रह गया है। पचास वर्ष पूर्व भारत में प्रति एक हजार जन्में बच्चों में लगभग 150 से अधिक अपना पहला जन्मदिन नहीं देख पाते थे। आज यह संख्या मात्र 40-45 है। अभी कुछ समय पूर्व भारत सरकार ने राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) के द्वारा अस्पतालों में सुधार लाने के लिए करोड़ों रुपए खर्च किये। अभी तक तो यह पता नहीं लग पाया है कि इस मिशन से ग्रामीण लोगों को कितना लाभ पहुँचा है लेकिन यदि मीडिया पर विश्वास किया जा सके तो इससे बहुत से राजनेताओं, मंत्रियों और अधिकारियों को करोड़ों का लाभ हुआ है और विशेष रूप से उत्तर प्रदेश में जो स्वास्थ्य के क्षेत्र में बहुत ही पिछड़ा प्रांत है।

देश में अल्ट्रासाउन्ड का प्रयोग बहुत सफल हुआ है और अनेकों दम्पत्तियों ने पुत्रियों को इस "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते" वाली धरती पर आने से रोक दिया है। मजे की बात तो यह है कि यह कार्यक्रम उच्च शिक्षा प्राप्त दंपत्तियों में अधिक है, जो केवल एक या दो ही बच्चे चाहते हैं लेकिन यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि उन्हें लड़का ही पैदा हो।

पिछले 20-25 वर्षों में भारत बहुत आगे बढ़ा है, विशेष रूप से आर्थिक क्षेत्र में। यदि ऐसी ही प्रगति होती रही तो शीघ्र ही उसके विकसित देशों की श्रेणी में आने की संभावना है। लेकिन कुछ शक्तियाँ इसे पीछे की ओर धकेल रही है: मसलन आर्थिक असमानताएं, भ्रष्टाचार और नैतिक ह्रास इतने प्रभावशाली हो गये हैं कि भारत इन क्षेत्रों में विकास की अपेक्षा एक कदम आगे है, इन सबके बावजूद समाज के अधिकतर अंगों में विकास की आशा बनी है लेकिन इसमें कितनी देर है, पता नहीं लग पा रहा है।

प्रोफेसर बलिराम
अतिथि संकाय

डर

सभी महान रचनाकारों में अपने सूर्य के उदित न होने का डरे किसे है?
लिखते-लिखते कलम के टूट जाने का डर किसे है?
डर है तो अपनी कृति से किसी के दिल को न छू पाने की नाकामी का
डर है तो भारत की इस दुनिया में गुमनामी का।

साहित्य के इन गोताखोरों में डूब जाने का डर किसे है?
कलम की इस तलवार को चलाते वक्त हाथ छिल जाने का डर किसे हैं?
डर है तो इस तलवार से किसी की जिन्दगी को बचा न पाने का
डर है तो समाज की इस कुंठित सोच को विस्तृत न कर पाने का।

देश के इन कलमकारों में बेवजह कलंकित हो जाने का डर किसे है?
राजनेताओं की तरह काले धन को छुपाने का डर किसे है?
डर है तो अपने कलम की स्याही के खत्म हो जाने का
डर है तो अपने ही विचारों में द्वन्द ठन जाने का।।

सिद्धार्थ गुप्ता
कक्षा 11
केन्द्रीय विद्यालय आई आई टी कानपुर

चेतन तत्व

[नोट- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर परिसर के संदर्भ में बल्लू (नील गाय का शावक) एवं सुन्दरी (एक गैर पालतू कुतिया) की भावनाओं का यह एक मानवीकरण है। पाठक इसे उसी संदर्भ में देखें।]

बल्लू– मेरे दादा, दादी ,परदादा एवं परदादी सभी यहाँ, इस वैज्ञानिक संस्थान परिसर के आस पास के जंगल में रहते थे। यह वैज्ञानिक संस्थान शिक्षा में सर्वोपरि है और रहेगा ऐसा मैंने अपने पूर्वजों से सुना है। कुछ साल पहले यहाँ एक विशाल जंगल था और हमारे संयुक्त परिवार के सदस्यों की संख्या भी कम थी, इसलिए हमें कभी भोजन के लिए भटकना नहीं पडता था।

सुन्दरी–मै भी इसी परिसर में पली, बड़ी हुई पर दुर्भाग्यवश अब मैं अन्धी हो गयी हूँ। इसीलिए ज्यादा दौड़-धूप नहीं कर पाती परन्तु परिसर के नेक शिक्षक एवं कर्मचारियों की मैं शुक्रगुजार हूँ जो सुबह-सुबह परिसर की टी-शॉप में मुझे जलेबी पकौड़ी का नाश्ता करवा कर मुझे सराबोर कर देते हैं। ज्वलंत विषयों पर शिक्षकों, विद्यार्थियों का वाद-विवाद सुनकर मैं आत्म विभोर सी हो जाती हूँ। सोचती हूँ, काश ! मैं भी पढ़ी होती और इस वाद-विवाद में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेती।

बल्लू–सुन्दरी ! तुम तो बहुत भाग्यशाली हो, क्योंकि परिसर में तुम्हें इतना अपार स्नेह जो मिला है। परन्तु मेरा और मेरे परिवार के सदस्यों का अनुभव इतना अच्छा नहीं है। जंगल संकुचित हो गया है, हमारी संख्या बढ़ गयी है, जंगल का भोजन हमें पर्याप्त नहीं होता, इसीलिये भोजन की खोज में कभी-कभी जंगल से परिसर में जाना पड़ता है जिससे परिसर वासी असुविधा महसूस करते हैं, सहम जाते हैं। नतीजतन, कभी-कभी हमको सुरक्षा अधिकारियों की लाठियों का सामना भी करना पड़ता है तब हम भी कभी-कभी उग्र रूप धारण कर लेते है। इन सबके चलते परिसर वासियों से, हम लोग चाहते हुए भी, मधुर सम्बन्ध बनाने में असमर्थ हो जाते हैं।

सुन्दरी देखो लोग बदल रहे हैं, समाज बदल रहा है। हम सभी जीवों के जीवित रहने की आयु में भी परिवर्तन आ रहा है। तुम अपनी दृष्टिहीनता से घबराओ नहीं। हमारे जंगल में होते हुए, यह दृष्टिहीनता तुम्हारी खुशियाँ नहीं छीन सकती। हम सभी प्राणी एक दूसरे पर निर्भर हैं। ये समीकरण जब आशीर्वाद के रूप में हमें ईश्वर ने दिया है तो आओ उसे व्यवहार में लायें । तुम जब चाहो जंगल में आ सकती हो, मुझसे एवं मेरे परिवार से मदद ले सकती हों। हम तुम्हें पनाह देकर बहुत ही हर्षित होंगे।

वस्तुतः यह बात किसी से छुपी नहीं थी, कि नील गाय के शावक-सुन्दरी को सही रास्ता दिखाने में मदद देते और सुन्दरी रात को जब खतरे का एहसास करती तो भौंक-भौंक करके वह बल्लू एवं उसके परिवार के सभी सदस्यों को समय से खतरे की सूचना दे देती।

सुन्दरी–बल्लू ! तुम और तुम्हारा परिवार धन्य है! जब से मैं तुम सब के संपर्क एवं पनाह में आई हूँ मेरे जीवन का रोम-रोम खिल गया है। दृष्टिहीनता से मेरे व्यक्तित्व में आया रिक्त स्थान भर गया है, मेरी कुंठा गायब हो गयी है। सच तो यह है तुम्हारे शावकों के साथ खेल कर मैं भरपूर जिंदगी जी रही हूँ। ईश्वर तुम्हे सदियों तक सलामत रखे।

सुन्दरी–बल्लू ! क्या तुम्हें पता है कि इस वैज्ञानिक संस्थान के परिसर एवं जंगलो में एक सत्य स्वरूप चेतन तत्व विद्यमान है जैसा कि मेरा मानना है.....

बल्लू–सुन्दरी ! तुम ये क्या कह रही हो? मेरी समझ से बाहर है.....

सुन्दरी–बल्लू ! समझने की कोशिश करो। देखो ना! कहाँ पूरे विश्व में अशांति है,परन्तु यहाँ के परिसर एवं जंगल में अलौकिक शांति है, इसपर मेरी-तुम्हारी सुन्दर गहरी दोस्ती। एक तरफ मैं-दुखित, गरीब गली की दृष्टि-हीन कुतिया, दूसरी ओर तुम-सुंदर, सक्षम उछलते कूदते नील गाय के शावक। बेजोड़ सा लगता है। यह दोस्ती इस परिसर एवं जंगल का चेतन तत्व नहीं है तो और क्या है? ईश्वर करे यह दोस्ती अमर रहे। मेरा पूरा विश्वास है कि वह दिन दूर नहीं जब बल्लू-सुन्दरी की सयानी दोस्ती के किस्से सभी के जुबान पर होंगे। भविष्य में हमारी ये दोस्ती परिसर वासियों के लिए प्रेरणा स्रोत होगी और सभी इसकी भूरि-भूरि सराहना करेंगे।

सुकर्मा थरेजा
पूर्व छात्रा

बदलते आयाम

हर क्षण हर पल नियति को
परिधान बदलते देखा है।
यारों की यारी का भी
अभिमान बदलते देखा है।
इंसान बदलते देखा है।।

कागज के चंद टुकड़ों की खातिर
कृपानों को भिड़ते देखा है।
अपने ही मंजर का दर्द लिए
अपनों को तड़पते देखा है।
लाचार सिसकती मानवता को
तिल-तिल मरते देखा है।
इंसान बदलते देखा है।।

दूषित पवन की लाचारी से
ऋतुओं को व्यवहार बदलते देखा है
अरुण-चन्द्र की लुकाछिपी से
दिन-रात बदलते देखा है।
जीवन की आपाधापी में पल-पल
व्यवहार बदलते देखा है
इंसान बदलते देखा है।।

छल-प्रपंच से रची-बसी इस दुनिया का
हर रंग बदलते देखा है।
रिश्तों की मर्यादा का हमने
आयाम बदलते देखा है।
अनाचार से कुंठित वसुधा पर
सच्चाई को सिसकते देखा है
इंसान बदलते देखा है।।

डॉ. राम नरेश त्रिपाठी 'मयूर'
पूर्व छात्र

कानपुर : 1

कड़ी धूप में तपता टूटा शहर
बंद एल्गिन मिल
कहीं घंटाघर
अंग्रेज़ों के जलसा घर में
1857 की निशानियाँ
आधुनिक फ़्लाइओवर तले
आदिम ज़मीन
'करेंट बुक डिपो' में उबाऊ निर्मल वर्मा
चुस्त कृष्ण बलदेव वैद
और मराठी में नामचीन, नापसंदीदा उदय प्रकाश

कानपुर : 2

किसी समय पूरब का मॅनचेस्टर
मिलों की क़ब्रें पालता है
-कहते हैं गाँधी मॅनचेस्टर के मजदूरों से मिलने आए थे-
रिक्शे से–यानी ऑटो से, यहाँ रिक्शे का मतलब साइकिल-रिक्शा होता है-
लाल ईंटों की ऊँची दीवार दिखती है
वह एल्गिन मिल है
उसे 'लाल इमली' बुलाते हैं
-ऑटोवाला गाइड करता है-
'लाल इमली' नाम भला है
लेकिन शहर
खुद को खड़ा कर रहा था
देखते ही देखते गिर पड़ा
और बाँध टूट गया

मूल मराठी कविता – डॉ. प्रशान्त बागड
मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग
अनुवाद – कौशिक द्राविड

देवी, देवता और वाहन

विश्व में सभी धर्मों में सबसे प्राचीन धर्म वैदिक धर्म है और वैदिक धर्म का वर्तमान स्वरूप ही सनातन धर्म है। वैदिक धर्म की अपनी एक विशेषता है कि वह अनेक मतों और पंथों को, अनगिनत विश्वासों को और इसी के साथ-साथ भारतीय दर्शन को अपने गर्भ में समेटे हुए है। किन्तु प्राचीन काल से ही समय एवं आवश्यकता के अनुसार सनातन धर्म में अनेक परिवर्तन होते चले आये हैं। हमारे विश्वास को दृढ़ करने के लिए यदि कुछ कथाएँ एवं कहानियाँ जोड़ी गयी हैं तो अनादिकाल से चली आ रही परम्पराओं ने भी अपना स्वरूप बदला है। सामाजिक परिवेश को ध्यान में रखते हुए हमारे ऋषि मुनियों ने, हमारे वेद-शास्त्रियों ने देवी-देवताओं के माध्यम से हमें विभिन्न बातें समझाने का प्रयास किया है।

आज आपका ध्यान ऐसी ही एक खास बात की ओर आकर्षित करना चाहेंगे जो हमारी आस्था के साथ जुड़ा हुआ है। इस विषय पर आपका भी ध्यान अवश्य गया होगा क्योंकि प्रतिदिन हम तस्वीर में, मंदिरों में या मूर्तियों में इसे अवश्य देखते हैं। पौराणिक कथाओं में, उपन्यासों में, वेदों में इसका उल्लेख विस्तार से किया गया है।

आप जानना चाहेंगे कि आखिर यह है क्या? ये हैं हमारे देवी-देवताओं के वाहन, उनकी सवारी जिस पर सवार होकर वो भ्रमण करते हैं। आश्चर्य की बात यह है कि देवताओं के वाहन उनके साथ ऐसे जोड़ दिए गए है कि उनके बिना भगवानों की कल्पना करना असंभव है। जैसे विष्णु जी के वाहन गरुड़ हैं, शिवजी के नंदी और माँ दुर्गा के शेर। यह लिस्ट तो बहुत लंबी है क्योंकि सभी भगवानों के अपने निश्चित वाहन हैं। अब जितने देवी-देवता हैं उतने ही उनके वाहन भी।

ऐसी भी मान्यता है कि उन्होंने अपने वाहन स्वयं निर्धारित नहीं किये होंगे और वाहन के रूप में पशु-पक्षी उन्हें ऋषि-मुनियों द्वारा ही दिए गए होंगें। तो अब प्रश्न यह है कि इन सर्वशक्तिमान देवी देवताओं के साथ वन-प्राणियों को ही वाहन के रूप में क्यों जोड़ा गया है? जबकि वास्तविकता यह है कि अपनी दिव्यशक्तियों से ये भगवान, क्षण भर में कहीं भी आने-जाने में पूर्ण रूप से सक्षम हैं। ऐसा क्यों नहीं हुआ कि किसी का वाहन, उड़नखटोला हो, या फिर कोई अन्य वस्तु?

गहन विचार के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वन-प्राणियों को हमारे भगवानों के साथ जोड़ने के पीछे अनेक कारणों में से सामाजिक एवं व्यवहारिक कारण प्रमुख हैं। हमारे देवी-देवताओं को जिस गुण से समृद्ध किया गया है, उन्हें उसी गुण वाले किसी पशु या पक्षी को वाहन के रूप में दिया गया है। यही कारण है कि सभी देवी-देवताओं की सवारियां भी पृथक-पृथक हैं। अब देखिये शिव भोले-भंडारी हैं, तुरन्त प्रसन्न हो जाते हैं लेकिन शीघ्र क्रोधित भी, तभी तो उनका वाहन नंदी है जो सीधा तो है लेकिन बल और शक्ति का प्रतीक भी है। इसी प्रकार तेजस्विनी माँ दुर्गा शक्ति एवं उर्जा की प्रतीक हैं तो स्वाभाविक है कि उनका वाहन बलशाली एवं शक्तिशाली होना चाहिये और हम सभी जानते हैं कि माँ दुर्गा शेर पर आरूढ़ हैं।

इसी प्रकार माँ लक्ष्मी हैं। इस लेख में हम मुख्यत: भगवान विष्णु की पत्नी एवं धन, संपदा और समृद्धि की देवी लक्ष्मी जी के वाहन के बारे में आपको बताएँगे। माँ लक्ष्मी का वाहन उल्लू है। सुनकर कुछ अटपटा सा लगता है । लेकिन उनका यह वाहन बिना सोचे-समझे या बिना किसी आधार के नहीं नियत किया गया है। इसके पीछे आध्यात्मिक सोच ही नहीं वरन् सामाजिक कारण भी है।

प्राचीन काल से ही भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है। तो स्वाभाविक है कि यहाँ पर कृषक अधिक हैं। किसान खेती करके फसल पैदा करता है जिससे उसे धन की प्राप्ति होती है। अब जाहिर सी बात हैं कि जहाँ खेती होगी वहाँ प्राकृतिक आपदाएं भी होंगी जैसे अधिक वर्षा, अधिक शीत या फिर सूखा आदि। इनसे जूझते हुए ही किसान को खेती करनी होती है। सोचिये तो किसान के लिए केवल प्राकृतिक आपदाएं ही नहीं हैं, मिट्टी में रहने वाले कीड़े-मकोड़े, चूहे-छछुंदर, सांप आदि भी उसे नुकसान पहुँचाने में कोई कसर नहीं छोड़ते हैं। ये सब उसके प्रमुख शत्रुओं में हैं। कीड़े-मकोड़ों को खत्म करने के लिए पशु-पक्षी तो है हीं, अन्य प्राकृतिक उपचार भी हैं जैसे नीम की खाद आदि। इसके अलावा कीट-नाशक दवाएं एवं रासायनिक खाद के प्रयोग से भी कीड़े-मकोड़ों से कुछ हद तक छुटकारा मिल सकता है। किन्तु किसान का एक ऐसा शत्रु है जिससे लड़ना बेहद कठिन हैं, अब यदि आप गौर करें तो और यह शत्रु है चूहा आकार में तो मोटा होता है जबकि अधिकतर पक्षियों की चोंचें बहुत छोटी, पतली और लंबी होती है, जिस कारण वे चूहों को पकड़ने में असमर्थ होते हैं। दूसरे भूरे-मटमैले रंग के कारण अधिकांश पक्षी पेड़ के ऊपर से या उड़ते समय आसमान से चूहों को आसानी से देख भी नहीं पाते हैं। अपनी पैनी दृष्टि से अन्य पक्षियों की अपेक्षा चील तथा बाज जैसे पक्षी ही आसमान में इतनी ऊंचाई पर उड़ते हुए भी इन्हें देख लेते हैं और सफलता से इनका शिकार कर पाते हैं। किन्तु केवल दिन के उजाले में।चील और बाज भी रात में शिकार नहीं करते। क्योंकि चूहे अन्य जानवरों से ज्यादा चतुर होने के साथ-साथ हमेशा चौकस भी रहते हैं अत: इन्हें पकड़ना इतना सरल नहीं है। अगर आपके घर में चूहे हैं, जैसा कि आमतौर पर घरों में होता है, तो आपने देखा होगा कि अन्य जानवरों से भिन्न, खाते समय भी चूहे अपना सर ऊपर रखते हैं। उनकी भूरी आँखें भी चंचलता से इधर-उधर ही देखती रहती हैं। अपने अनेक शत्रुओं से बचने के लिए ज्यादातर चूहे दिन में अपने बिलों में ही रहते हैं और रात के अँधेरे में ही खाने की खोज में बाहर आते हैं।

रात के अंधकार में जानवर तो शिकार कर सकते हैं किन्तु ऐसे पक्षी बहुत कम हैं जो रात में शिकार करने में समर्थ हैं। उन पक्षियों में से एक पक्षी है, उल्लू। लेकिन उल्लू में ऐसा क्या है जो अन्य पक्षियों में नहीं हैं? आखिर उल्लू भी तो एक छोटा सा साधारण पक्षी ही है ! विचारणीय यह है कि जब पैनी दृष्टि रखने वाले चील और बाज जैसे सशक्त पक्षी दिन के उजाले में चूहे को पकड़ने में अक्सर असमर्थ रहते हैं, तो रात के अँधेरे में उल्लू जैसा छोटा साधारण पक्षी इतने चंचल-चपल जानवर का शिकार कैसे कर सकता हैं ?

रात के अँधेरे में सफलतापूर्वक शिकार करने के लिए तीक्ष्ण-दृष्टि का होना

अति आवश्यक है। पैनी दृष्टि के अभाव में न तो जानवर नज़र आयेगा और न ही उसकी दूरी आंककर उसपर आक्रमण की रणनीति तय की जा सकती है। अब यदि उल्लू के आकार को देखा जाय, तो उल्लू की आँखें उसके शरीर की तुलना में काफी बड़ी होती हैं जिस कारण वह उन्हें अपने कोटर में नहीं घुमा सकता। किन्तु इस कमी की पूर्ति के लिए प्रकृति ने उसे एक विशेष क्षमता प्रदान की है। वह अपनी गर्दन को बहुत तेजी से पीछे तक घुमाकर शिकार खोज सकता है। यही नहीं, तेज एवं धीमी उड़ान की एक विशेष योग्यता भी उल्लू के पास है जिसका वह शिकार करते समय बखूबी इस्तेमाल करता है। अपने पंखों की बनावट के कारण उड़ते समय उल्लू के पंखों की फड़फड़ाहट नहीं होती है। अतः शिकार को उसके आक्रमण का आभास भी नहीं हो पाता और उसे उल्लू का आहार बनते देर नहीं लगती है। इसी के साथ-साथ रात के अँधेरे में खेतों और जंगलों में अपना शिकार खोजते हुए उल्लू जानवर की ध्वनि या आहट सुनकर दिशा का निर्धारण करते हुए आंकलन करता है कि शिकार की दूरी कितनी है। खास करके चूहों की। अब आप जानना चाहेंगे कि यह कैसे और चूहे ही क्यों पकड़ता है? यह वैज्ञानिक तथ्य है कि चूहे की आवाज़ बेहद महीन एवं ऊँची होती है और उल्लू की श्रवण शक्ति उस ऊँची और महीन ध्वनि को त्वरित गति से पहचानने में अत्यंत सक्षम। अन्य पक्षियों में यह क्षमता नहीं होती हैं। इसके साथ-साथ उल्लू की सबसे बड़ी खूबी है कि वह किसी भी ऋतु के अनुरूप अपने को ढ़ाल कर शिकार करने में निपुण है। यहाँ तक कि उसपर शीत ऋतु, वर्षा ऋतु, बर्फीली हवाओं, का भी प्रभाव नहीं पड़ता।

अब यह विचारणीय है कि उल्लू को ही क्यों लक्ष्मी का वाहन माना जाता है। बात बहुत सरल है। चूहे अनाज का सर्वाधिक विनाश करते हैं। कुछ खाकर और कुछ अपने बिलों में अत्यधिक जमा करके। चूहे आवश्यकता से अधिक संचय करते हैं और कुछ समय बाद बिलों को छोड़ देते हैं जिससे अनाज बर्बाद होता है। वे न केवल अनाज की बर्बादी करते हैं बल्कि खेतों में ज़मीन खोदकर अपने बिल बनाते हैं और खेती में बाधा उत्पन्न करते हैं। खेती का क्षय होता है जिससे किसान का नुकसान होता है। अब किसान के सबसे बड़े शत्रु का उल्लू ही तो नाश करता है। चूहों को मारकर उनकी संख्या कम करके वह एक प्रकार से अनाज में वृद्धि ही तो करता है। जब अनाज में वृद्धि होती है तो धन में वृद्धि होती है, घर में अधिक सम्पत्ति आती है। जहाँ धन है वहाँ समृद्धि है और जहाँ समृद्धि है वहाँ लक्ष्मी है। यदि किसान से पूछा जाय तो स्वाभाविक है कि वह यही कहेगा कि लक्ष्मी जी उल्लू पर सवार होकर उसके घर आती हैं अत: देवी लक्ष्मी का वाहन उल्लू ही होना चाहिए। इससे परे एक अन्य महत्वपूर्ण कारण भी है जिससे उल्लू ने यह स्थान प्राप्त किया है। जिस प्रकार उल्लू के पास से गुज़र जाने का आभास नहीं होता है उसी प्रकार लक्ष्मीजी कब आती हैं, कब चली जाती हैं या फिर कब आयेंगी, की सूचना मिल पाना भी सम्भव नहीं है।

लक्ष्मी के आगमन को धन एवं समृद्धि का माध्यम बताया गया है। धन एवं संपत्ति जब भी अधिकता से आती है तो व्यक्ति की दृष्टि अपने आप भ्रमित हो जाती है और अहंकारवश उसकी सोच धुंधली पड़ जाती है। ज्ञान के अभाव में वह जीवन के वास्तविक सत्य को देखने की क्षमता खो देता है। उल्लू के संदर्भ में उसका जो सामाजिक स्वरूप है, वह यह भी बताता है कि लक्ष्मी व्यक्ति को अधिक धन देकर मूढ़ कर देती हैं। इन्हीं कारणों से यद्यपि लक्ष्मी धन एवं समृद्धि की देवी स्वीकारी गयी है, हमारे ऋषि-मुनियों ने मूलत: उन्हें मानसिक समृद्धि के रूप में माना है। प्रार्थना यही हो कि जहाँ लक्ष्मी हों वहाँ सरस्वती का वास अवश्य हो। चंचला लक्ष्मी की कामना भगवन विष्णु के साथ ही करनी चाहिएजो गरुड़ पर विराजमान, संयमी एवं धैर्यवान हैं।

देवताओं के वाहन पशु-पक्षी होनो के अन्य कारणों में प्रकृति का संतुलन तथा उसकी सुरक्षा एक अत्यंत महत्वपूर्ण कारण है। आज भी लक्ष्मी जी का वाहन होने के बावजूद उल्लू को शुभ नहीं माना जाता। उसको निशाचर मानते हैं और सुन्दर पक्षियों में उसकी गणना नहीं की जाती है। उल्लू को खंडहरों में रहने वाला अपशकुनी पक्षी माना जाता है। यहाँ तक कि उसकी आवाज़ भी एक अपशकुन है। इन्हीं कारणों से समाज में उल्लू के प्रति प्रेम और सहानुभूति के बजाय घृणा का भाव प्रथम है। संभवतः प्रकृति का संतुलन बनाए रखने के लिए और उल्लू के प्रति समाज की इस भावना को सुधारने हेतु हमारे ऋषि-मुनियों ने उल्लू को लक्ष्मीजी का वाहन बनाया जिससे उसे भी प्रेम और सौहार्द्र से देखा जा सके ।

वत्सला मिश्रा
सामुदायिक रेडियो केन्द्र

दामिनी

पलक मूंदते ही दामिनी तो कभी गुड़िया नजर आती है,
सिसकती, दम तोडती मेरी संस्कृति नज़र आती है।

भारत माता की संस्कारी पावन धरा-भूमि पर आज,
माता की दुलारी, दामन अपना बचाती नज़र आती है।

ऋषियों की तपोभूमि में, माता का स्वरूप थी नारी,
हद दानवता की देखी, मां, मातृत्व बचाती नज़र आती है।

मनोविकृति कहें या मानव की मानवता का विघटन,
इन्सानियत मेरे देश की अब, नजरें चुराती नज़र आती है।

पलक मूंदते ही दामिनी तो कभी गुड़िया नज़र आती है,
सिसकती, दम तोड़ती मेरी संस्कृति नज़र आती है।

वहशियत का नंगा नाच चारो ओर, नाच रहा है दु:शासन,
बचा सके बहन को अपनी, सूरत कृष्ण की नहीं नज़र आती है।

ना समझना कमजोर बेबस, ना अबला, अब नारी को,
उठा के तलवार लक्ष्मीबाई सी वो नज़र आती है।

बदलना होगा राक्षस तुझको अब, कहता हे, ये 'राज'
वरना सूरत में दामिनी की अब, दुर्गा नज़र आती है।

पलक मूंदते ही दामिनी तो कभी गुड़िया नजर आती है,
सिसकती, दम तोड़ती मेरी संस्कृति नज़र आती है।

अनुराग सिंह चौहान

यात्रा : एक विहंगम विचार

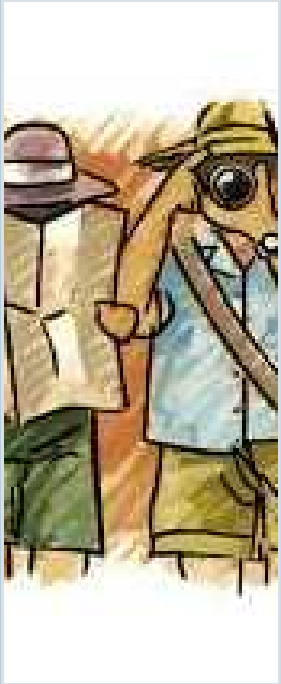

यात्रा! भला यह भी कोई विषय है? एक नितान्त अर्थहीन, अतार्किक, बेदम और बोरिंग विषय; पर बहुतों के लिये अतीव रुचिकर, रोमांचपूर्ण, जिज्ञासामय, कुतूहलयुक्त; तो कुछ के लिये कतई निरपेक्षता-तटस्थता का विषय। यात्रा अन्ततः है क्या? इसे किस अर्थ में लेना चाहिए? इसके क्या भिन्नार्थ व प्रकार हैं? यह आम लोगों की समझ वाले देशाटन का पर्याय है, तीर्थाटन है, हज यात्रा है, वैटिकन में मत्था टेकना है; या यह जन-सामान्य द्वारा साधारण तौर पर जानी-समझी जाने वाली पर बिना संज्ञा वाली सामान्य जीवन-यात्रा है या इस धरा-ब्रह्माण्ड में ईश्वरी कृपा के रूप में सर्वत्र प्रसरित प्रकृति के अगम, अगाध, विस्तृत साम्राज्य के नैसर्गिग, अनुपम, अप्रतिम सौन्दर्य अथवा सृष्टि के जैविक-भौगोलिक वैविध्य के उद्‌बोध व अन्वेषण का व्यवहारगत प्रयास है। मनुष्य की स्वाभाविक जिज्ञासा प्रकृति की परिणिति है या निज-अस्तित्व और उसके अबूझ सृजनकर्ता परम नियामक परमपिता व अगोचर पारमेश्वरी सत्ता की खोज हेतु आध्यात्मिक पथ का अनुशीलन है। निस्सन्देह कहा जा सकता है कि ये सभी स्वयं में पृथक एवं विशिष्ट प्रकार की यात्रायें हैं जिन्हें मानव अपने मानस व अन्तस के मनोभावों व सोच की दिशा के अनुरूप कोई शीर्षक दे देता है और फिर तदनुरूप उसी परिमाण में तदाशय की सुखानुभूति-संतुष्टि प्राप्त करता है।

वैसे देखा जाए तो संसार के बहुसंख्य या कहें कि लगभग 98% लोग जीवन को सामान्य रूप से जीने, अपने जीवन से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सम्बद्ध पात्रों व जीवन के प्रति मोटे दायित्वों के निभाने को ही अपनी यात्रा समझते हैं जिसे दूसरे अर्थो में लोग जीवन-यात्रा के रूप मे जानते हैं; भले ही अपनी सोच में अनजाने वे इसे कथित आशय का सम्बोधन न देते हों। परन्तु कठोर सत्य यही है कि मानव समुदाय का यह वही छोटा समूह है जो यथार्थ में जीवन में यात्रा के विविध आयामों को सार्थक करते हुए उन्हें एक साकार रूप प्रदान करता है एवं तत्क्रम में अपनी विस्मय भरी रोमांचक खोजों-उपलब्धियों से संसार के बहुसंख्य समुदाय को कुछ अद्‌भुत जैसा प्रदान कर उसे जब-तब चकित और चमत्कृत करता रहता हैं।

माना जा सकता है कि अधिकांश लोगों के लिये यात्रा वस्तुतः देशाटन है जो मनुष्य किसी न किसी कारण सम्पादित करता हैं परन्तु ये यात्रायें प्रत्यक्षतः संसार के उन क्षेत्रों को आवृत्त करती हैं जहाँ के बारे मे आम लोगों से जानकर, सुनकर अथवा कहीं से पढ़कर वह स्वयं वहाँ जाने के लिए उत्कंठित हो उठता है; वहीं कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अपनी स्वाभाविक जिज्ञासा, कुतूहल, रोमांच व उन्माद के वशीभूत् अथवा कुछ कर गुजरने या कुछ नया खोजने के भाव से उत्प्रेरित होकर यात्रार्थ उद्यत हो जाते हैं भले ही ऐसे गन्तव्य स्थल दुर्गम-दुस्तर क्यों न हों; वहीं कुछ लोगों को ये यात्रायें सैन्य धर्म, सेवाधर्म अथवा राजधर्म के कारण करनी पड़ती हैं। लेकिन मोटे तौर पर देखा जाए तो संसार के अधिसंख्य लोग यात्राओं में सामान्यतः सुरक्षा और सुगमता को ही सर्वोपरि स्थान देते हैं और वे बस सुरक्षित, सहज, जाने-पहचानें व सुने-सुनाये स्थानों पर ही यात्रा को वरीयता देते हैं। तथापि कहा जाये तो वह यात्रा ही क्या जिसमें सामान्य से हटकर कुछ रोमांच न हो, यात्री के अन्तः में गन्वेषण-अन्वेषण का उद्‌दीपन न हो, कुछ खोजने की ललक या जन-सामान्य के समक्ष कुछ नया प्रस्तुत करने और लीक से हटकर करने का उद्यम न समाहित हो। ऐसा न होता तो संसार में क्योंकर कोलम्बस, वास्कोडिगामा, ह्वेनसांग, फाह्यान, मार्कोपोलो जैसे पात्र इतिहास बन-बना पाते, क्योंकर गुलीवर, सिन्दबाद जैसे कथापात्र अमरत्व प्राप्त कर पाते, क्योंकर लोग साइबेरिया, अण्टार्कटिका, ध्रुव प्रदेशों मे यात्रा का साहस जुटा पाते और क्यों कर चन्द्र, मंगल, शुक्र जैसे ग्रहों-उपग्रहों तथा अन्तरिक्ष में यात्रा करने का जोखिम ले पाते?

अतएव हमारे इस विचार का विषय तीर्थाटन, सामान्य देशाटन या सहज-सुगम स्थानों का परिभ्रमण तो निश्चय ही नहीं है; प्रत्युत यदि इसमें कुछ है तो वह संसार का आह्‌लादकारी, अनोखा, भौगोलिक वैविध्य है, प्रकृति की सुरम्य, रमणीक व मनोहारी छटा का अनन्त विस्तार है, पृथ्वी के ध्रुवीय प्रदेशों का अक्षुण्ण आकर्षण है, महासागरों की उपरिवर्ती उत्ताल तरंगें हैं, उनके गर्भ में व्याप्त अद्‌भुत वानस्पतिक व खनिज कोष, जीव-जन्तुओं की असीम विविधता एवं उनके गर्भ में विरोधाभासी तत्वों की एक साथ विद्यमानता है; परन्तु इन सबसे परे मनुष्य द्वारा स्वयं के रहस्यमय अन्तः की खोज के उसके प्रयास, इत्यादि-इत्यादि भी हैं। इतिहास साक्षी है कि अतीत में भारत के आर्थिक चरमोत्कर्ष की कथायें-गाथायें दूर-दूर तक फैली थीं व सम्पूर्ण विश्व इसकी समृद्धि की दन्त-कथाओं से सुवासित था। इसी पृष्ठभूमि ने वास्कोडिगामा को दूरस्थ यूरोप से यात्रा कराते हुये अन्ततः उसे उसके अभीष्ठ लक्ष्य, भारतभूमि तक पहुँचा दिया। वहीं भारत की ही खोज के लिये निकले कोलम्बस की यात्रा ने उसे भारत के स्थान पर अन्ततः अमेरिकी महाद्वीप पहुँचा दिया जिसे वह प्रथमतः भारतवर्ष ही समझा था। इससे हटकर सिकन्दर तथा चंगेज खां के उदाहरण हैं जिन्होने कथित रूप से विश्व-विजय एवं महत्वाकांक्षी सैन्य अभियानों के सिलसिले में अपने सम्पूर्ण सैन्य दल के साथ क्रमशः यूरोप से भारतवर्ष तक तथा चीन से यूरोप-ब्रिटेन तक की यात्रायें कर डाली थीं, यद्यपि इनमें यात्रा के कथित सदुद्देश्य किसी प्रकार भी सन्निहित नहीं थे।

यह सर्वविदित है कि उत्तर ध्रुवीय परिक्षेत्र (इसी प्रकार दक्षिण ध्रुवीय भी) सम्भवतः सदैव से हिमाच्छादित रहे हैं; किन्तु यह अनायास नहीं है कि उसके हिमसागरीय प्रभाव से ब्रिटेन व जापान तथा उनके निकटस्थ क्षेत्र मात्र इस कारण हिमक्षेत्र बनने से बच गये कि अन्ध-महासागर और प्रशान्त महासागर (अटलाण्टिक तथा पैसिफिक ओशन) में निरन्तर बहने वाली लैब्रोडोर, ग्रीनलैण्ड व क्यूराइल जैसी शीतधाराओं के साथ-साथ उनकी विरोधाभासी गल्फस्ट्रीम, नार्वेइन, अलास्का और क्यूरोसीवो जैसी उष्ण-धारायें भी पूर्ण तीव्रता के साथ वहाँ प्रवाहित होती हैं। यह सर्वमान्य तथ्य है कि ये उष्ण-धारायें उपर्युक्त देशों व क्षेत्रों के लिये मानो जीवन-दायिनी ही हैं। महासागरों के गर्भ में विद्यमान प्रकृति का यह विरोधाभासी चरित्र नहीं तो और क्या है कि उनमें एक धारा यदि एक दिशा में बहती है तो उसी के सन्निकट या समानान्तर दूसरी धारा विपरीत दिशा में। इन धाराओं का यह चरित्र मनुष्य व संसार के लिये वस्तुतः अद्भुत उपहार या वरदान ही है। इन्हीं महासागरों में रमते जीव-जन्तुओं का विशाल, अनन्त और विविधता भरा समूह तो सभी के लिए जैसे सदा रोमांच का विषय रहा है, जब कि उनमें विद्यमान वनस्पतियों व खनिज सम्पदाओं की खोज मनुष्य अब तक लगभग ना के बराबर ही कर पाया है और जिसके लिये विश्व भर के न जाने कितने देशों के खोजियों की यात्रायें सतत जारी हैं।

इनसे हटकर पृथ्वी के स्थलीय क्षेत्र हैं जहाँ की यात्राओं ने लोगो को न केवल निरन्तर रोमांचित किया है वरन् अनेक बार उन्हें हतप्रभ भी किया है। इन्हीं यात्राओ के अनुक्रम में मनुष्य ने न जाने कितनी बार अपने प्राणों की आहुति भी दी हैं जिनके परिणामस्वरूप उसे दक्षिण अमेरिका की अमेजन नदी व उसके नाम से ही विख्यात विशाल अमेजन वन-क्षेत्र की जानकारी हो पायी। इस अमेजन क्षेत्र के सघन वन व उसकी अकूत वन-सम्पदा मनुष्य के लिये अब तक रहस्यमयी बनी हुई है। यह अमेजन नदी के चतुर्दिक फैला विशाल वन क्षेत्र ही है जहाँ मानवभक्षी वृक्ष पाये जाते हैं जिन्होंने अनेक सत्साहसी यात्रियों को सदा के लिये निगल लिया। वहीं दक्षिण अमेरिकी महाद्वीप के ही पश्चिमी तट स्थित ऐण्डीज पर्वत की एवं उत्तरी अमेरिकी महाद्वीप के पश्चिम के संयुक्त राज्य अमेरिका के एरीजोना राज्य में स्थित ग्रैण्ड कैन्यन रॉक्स; जो प्रकृति के सात आश्चर्यो में से एक है, की विश्वविख्यात श्रृंखलायें हैं जो यात्रा के सदा सर्वदा से स्थायी आकर्षण केन्द्र हैं। दूसरी ओर अफ्रीका महाद्वीप स्थित विश्व का विशालतम सहारा मरूस्थल है जहाँ ब्रिटेन की छोटी सी सैन्य टुकड़ी के विस्मयकारी चक्रव्यूह ने द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान हिटलर के दुर्दान्त सहयोगी हिमलर की उस क्षेत्र में युद्ध हेतु रची गयी सम्पूर्ण व्यूहरचना को पूर्णतया ध्वस्त व पराभूत कर दिया था। इसी भाँति अन्ध महासागर में उत्तर ध्रुवीय क्षेत्र के निकटवर्ती ग्रीनलैण्ड व आइसलैण्ड के चिरन्तन हिमक्षेत्र हैं जहाँ सैलानियों की यात्रा-पिपासा कभी तृप्त नहीं होती। इसी सागर के दक्षिण का समीपस्थ क्षेत्र है जो गल्फस्ट्रीम जैसी उष्ण धारा के सम्पर्क से सदा-सर्वदा गहनतम कोहरे से आच्छादित रहता है और जिसके आगार में दूर-दूर तक फैली तीक्ष्ण नुकीली चट्टानें हैं जिनसे टकराकर अब तक न जाने कितने जलयान अपनी यात्रा के दौरान विनष्ट हो गये अथवा उसके अगम तल में समा गये। परिणामस्वरूप इन जलयानों को उक्त चट्टानों के खतरे से सचेत करने हेतु मनुष्य को अन्ततः "वहाँ प्रकाश स्तम्भों" की व्यवस्था करनी पड़ी। कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण पृथ्वी पर ऐसे न जाने कितने स्थलीय क्षेत्र हैं जो अपनी प्राकृतिक रमणीयता, मानव निर्मित अवस्थापनों तथा ऐतिहासिक-धार्मिक पृष्ठभूमि में सैलानियों को सदा-सर्वदा से वहाँ की यात्रार्थ आमन्त्रण देते रहे हैं।

वहीं मानव-मात्र के सत्साहस की यह पराकाष्ठा ही है कि उसने सुदूर अन्यान्य ग्रहों में जीवन की खोज के निमित्त अबूझ अन्तरिक्ष में भी छलांग लगा डाली और तदनुक्रम में हमने यूरी गागरिन, नील आर्मस्ट्रांग तथा कल्पना चावला जैसे अमर इतिहास पात्रों को अपने जीवन काल मे ही देख लिया। इनमें से कल्पना चावला के लिये तो हमें अपने अन्तस मे अतिरिक्त गर्वानुभूति होती है क्योंकि वे किसी न किसी प्रकार भारत से सम्बद्ध थीं। इसी प्रकार दक्षिण अण्टार्कटिक में नाना शोधो के क्रम में विश्व के अनेक देशों के जो अभियान दल अनवरत यात्रारत हैं, उनमें भारतीय प्रतिनिधित्व निस्संदेह अपनी निरन्तरता से विशिष्ट स्थान रखता है। इस सन्दर्भ में सर अर्नेस्ट शैकिल्टन की 1914 से 1917 की अवधि में इम्पीरियल ट्रान्स-अटलांटिक अभियान यात्रा का उल्लेख सर्वथा समीचीन है जिसमें उनका सम्पूर्ण अभियान दल मृत्यु के सुनिश्चित गाल से अभियान को सफलतापूर्वक सम्पन्न करते हुए बचने में सफल रहा था।

अब विचार का बिंदु यह है कि उपरिवर्णित नाना प्रकार की यात्राओं में से कौन सी यात्रा श्रेयष्कर है? यदि यह भौतिक जगत की यात्रा है, तो यह उसको चयनित करने वाले पात्र का अपना इच्छित अभीष्ठ है। इसी प्रकार अन्यान्य प्रकार की यात्रायें, यात्रा करने वाले व्यक्ति के अपने वैयक्तिक निर्णय का प्रतिफल होती हैं। परन्तु इस तथ्य पर कदाचित ही विवाद हो कि जीवन के मूल तथा उसके रहस्यमय गूढ़ार्थ की खोज केवल अध्यात्म पथ की यात्रा से ही सुगम है। अतएव, लेखक के अभिमत में सच्चे यात्री तो वे ही हैं जो अध्यात्म-पथ के अनुशीलन को अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य बनाकर आगे बढ़ते हैं। यद्यपि ऐसे यात्री जिन्हें अन्यथा हम साधक की संज्ञा देते हैं, और जो अपने लक्ष्य के अनुश्रवण में गम्भीरता से प्रयासरत हैं, बहुसंख्य भले ही न हों लेकिन उनकी इस सामान्य अवधारणा, कि यह सम्पूर्ण जगत एवं इसकी भौतिक प्रत्यक्षता केवल नश्वर है, से किसी प्रकार भी असहमत नहीं हुआ जा सकता । इस यात्रा में कुछ साधक ईश्वर के साकार रूप के आराधन का अवलम्ब लेते हैं तो अन्य कुछ उसे निराकार मानकर आगे बढ़ते हैं, वहीं कुछ ध्यान-साधना के माध्यम से। मोटे रूप से कहा जाए तो इस यात्रा का एक पथ बाह्यसाधना का है तो दूसरा अन्तर-साधना का, जिसे ज्ञानी जन अधिक प्रखर, प्रभावी, द्रुत-परिणामी और चरम अभीष्ठ की प्राप्ति में अत्यन्त शक्तिशाली मानते हैं। सच्चे ज्ञानी यह भी मानते हैं कि उपर्युक्त में से द्वितीय पथ की यात्रा किसी सद्गुरु के शिष्यत्व में ही अतीव सहज एवं सुगम होती है।

अब यह तो पाठकों, व्यक्तियों और विचारमना लोगों का अपना निर्णय हैं कि उपरिवर्णित अनेक प्रकार की यात्राओं में से वे किसे अधिक श्रेयष्कर मानते हैं। तथापि यह अपेक्षा अवश्य हैं कि वे जब भी किसी यात्रा-पथ पर प्रयाण की सोचेंगे, तो इस सन्दर्भ में उनका निर्णय विचारपूर्ण एवं विवेक-सम्मत होगा।

वी.पी.गुप्ता
श्रम सलाहकार
विधि प्रकोष्ठ

बुंदिया

दक्षिण बिहार के गाँवों में एक अजीब सी बात सामान्यततः देखने को मिलती है। हरेक गाँव के मुहाने पे छोटी जाति के लोगों का मुहल्ला होता है। ज्यादातर डोम या मुसहर का। मेरी माँ एक बार बोल रही थी पता नहीं पुराने ज़माने के लोगों को क्या सूझा था कि हरेक गाँव के मुहाने पे डोम जमे हुए हैं, आते जाते इनके बीच से गुजरना पड़ता है, हमेशा डर लगा रहता है पता नहीं कौन छुआ जाये। डोमों में बड़े तो ऐसा साहस नहीं करते कि आते जाते किसी ऊंची जाति के भले लोगों में सटने की गलती करें लेकिन बच्चे गलियों में दौड़ते रहते हैं। और कभी-कभी गलती से लोगों को छू भी जाते हैं और फिर गालियों की बौछार शुरू हो जाती है। उनके अस्पृश्य होने के कारण उन्हें कोई मारता तो नहीं और गालियों से उन बच्चों को कहाँ कोई फर्क पड़ता। गालियाँ देने और सुनने की तो उनको आदत होती है। घर में माँ-बाप की गाली, अगर बड़े भाई-बहन हैं तो उनकी गाली और अगर कोई बच्चा काम पे जाता हो तो वहाँ मालिक की गाली। वैसे मेरे पास माँ की बात का ठीक जवाब तो नहीं था लेकिन मुझे बचपन से ही ऐसा लगता था कि अगर गाँव में छोटी जाति के लोगों को कोई सुविधा मिली है तो इसमें भी बड़ी जाति के लोगों का कोई न कोई स्वार्थ जरूर सिद्ध होता होगा और इसीलिए मैंने माँ को एक बचकाना सा जवाब दे दिया था कि अगर गाँव पे हमला होगा तो सबसे पहले जान आगे वाले की ही जाएगी जरूर इसलिए हरेक गाँव के मुहाने पे डोमों का मुहल्ला होता है लेकिन मेरा गाँव इस मामले में थोड़ा अलग है। मेरा गाँव सड़क के किनारे-किनारे काफी दूर तक फैला हुआ है और गाँव की चौड़ाई बहुत कम है और सड़क से गाँव के अन्दर जाने के लिए दर्जनों गलियाँ हैं इसलिए कोई भी मुहल्ला ऐसा नहीं है जिससे होकर सारे गाँव के लोगों को जाना पड़ता हो। परन्तु मेरे घर वाली गली के मुहाने पे ललन डोम का घर था। परन्तु उसके घर वाले गाँव में बहुत कम ही रहा करते थे। इस आधुनिकता में गाँव में डोमों के लिए काम बचा ही नहीं था। धनबाद में उसकी पत्नी का कोई सम्बन्धी रहा करता था, वहाँ कुछ काम मिल जाता होगा शायद। लेकिन अपनी जन्मभूमि से सभी को प्यार होता है, शायद इसलिए वो भी कभी-कभी गाँव आ जाता था। जब आता था तो पैसा कमाकर आता था और पैसा खत्म होने पे वापस चला जाता था। जब भी आता था गली में बहुत गन्दगी फैला देता था। उस समय उसके घर के पास से अजीब तरह की सड़ांध जैसी गंध आती थी। लेकिन जाने से पहले सारी गन्दगी साफ करके जाता था। ठंड का समय था और मैं घर से निकल कर मुख्य सड़क की तरफ जा रहा था। माँ पास के ही किसी घर में गयी हुई थी। मेरी आदत थी कि जब भी कभी माँ घर से बाहर जाती तो मैं गली के मुहाने पे खड़ा होकर माँ का इंतज़ार करता था। ललन के घर से लता मंगेशकर के किसी पुराने गाने की आवाज आ रही थी। उसके घर के पास एक कम ऊंचाई की दीवार थी, शाम के समय जिसपर बैठकर हम लोग गप्पें किया करते थे। मैं उसी दीवार पे बैठ गया।

गाना सुनने का मुझे बचपन से शौक था और उस समय मेरे घर में एक ही रेडियो था जिसपे हम लोग कभी-कभी गाना सुन पाते थे। बमबम सिंह का बड़ा बेटा उधर ही आ रहा था, मुझे देखा तो वो भी वहीं बैठ गया। मैंने उससे पूछा की ललन कुछ ज्यादा दिनों तक टिका हुआ है। उसने बताया था की ललन के बड़े बेटे की शादी थी। उसी समय मेरा ध्यान ललन के बरामदे की ओर गया जहाँ चार-पाँच बच्चे शायद खाने के लिए बैठे हुए थे। मुझे पता था कि ललन को दो बेटा और एक ही बेटी थे, जो उतने छोटे नहीं थे। पूछने पे पता चला कि अगले ही दिन शादी थी, मतलब बच्चे शादी में आये हुए लोगों के थे। बच्चों के पत्तल में दाल और चावल तो शायद पर्याप्त मात्रा में थे लेकिन सब्जी की कमी थी, इसलिए बच्चे आपस में झगड़ रहे थे। पापड़ भी था शायद और बच्चे एक दूसरे को मिले पापड़ के टुकड़े गिन रहे थे। सबको लग रहा था कि उसके पत्तल में सबसे कम टुकड़े हैं। उन्हें देखकर मुझे अपना बचपन याद आ गया जब हम भाई बहन भी इसी तरह कोई अच्छी चीज खाने के लिए लड़ा करते थे।

तभी अचानक मतलू सिंह ललन के दरवाजे के पास दिखाई दिया। बमबम सिंह के बेटे से मजाक में बोला, देखो! सीखो इससे कुछ, जाति पांति भुला कर डोम के घर भोज खाने जा रहा है। मतलू सिंह जो अपनी बदतमीजी के लिए प्रसिद्ध था, ललन को बड़े प्यार से आवाज दे रहा था। तभी माँ मुझे गली के छोर से आते हुए दिखाई दी। माँ जब आई तो उन्हें लगा कि मैं उनके साथ घर जाऊंगा। लेकिन मैंने कहा कि आप जाइए मैं आ रहा हूँ। जब माँ गई तो मैं धीरे-धीरे ललन के घर की ओर चला और इतनी दूरी पे जाकर रुका जहाँ से उनकी बात-चीत सुनी जा सकती थी।

मतलू सिंह ने थोड़ी देर तक इधर उधर की बात-चीत के बाद पूछा था-
शादी के लिए मिठाई खरीद लिया क्या ?
ललन- नहीं मालिक! अभी कहाँ खरीदे.
मतलू- तो खरीद लो.
ललन- हाँ, देखते हैं.
मतलू- वैसे कितना खरीदना है ?
ललन- यही कोई 14 किलो.
मतलू- इतने से काम चल जायेगा?
ललन- हाँ मालिक! 29 ही तो लोग हैं.
मतलू- ठीक है तो मैं चलता हूँ.

इतना कहकर मतलू सिंह वहां से थोडा आगे खिसक गये वैसे यह बात बड़ी अजीब लगी कि मतलू सिंह इतनी सी बात पूछने के लिए उसके घर तक आये। मैं यही सोच रहा था तभी मतलू सिंह पलटा और बोला-वैसे चाहो तो मुझसे भी खरीद सकते हो।

ललन-लेकिन मालिक आप कब मिठाई की दूकान खोले? मैं भी सोचने लगा कि मतलू सिंह कैसे उसे मिठाई बेचेगा।

मतलू-अरे नहीं। आज वो मेरे बेटे का जन्मदिन है तो बुंदिया ज्यादा आ गया सो अगर खरीदना है तो बोलो।

ललन थोड़ी देर सोचकर बोला-अच्छा कीमत क्या है ?

मतलू-अब कीमत क्या? हम बिजिनेस थोड़े कर रहे हैं। बाजार का जो भाव है वो दे देना। बाद में भी दे सकते हो अभी कोई जरुरी नहीं है।

अब यह कोई भी समझ सकता था कि कोई भी जन्म दिन पे इतनी मिठाई नहीं मँगा लेता है कि बेचना पड़े। बात तो ललन की भी समझ में आ रही थी और मतलू सिंह की आवाज से भी लग रहा था कि वो बुंदिया किसी भी तरह बेचना चाहता था। ललन ने उससे पूछने की कोशिश भी की, लेकिन मतलू सिंह अपने काम मैं माहिर था। उसने अचानक से बोला कि अच्छा चलो, बाज़ार से 10 रूपये किलो का कम दे देना। ललन बोला- लेकिन मालिक आपकी मिठाई तो बासी होगी। बात साफ थी कि ललन और कम कीमत देना चाहता था। थोड़ी देर बाद बाज़ार से प्रति किलो कम पे बात पक्की हुई जिसका मतलब था बुंदिया ललन को बाज़ार की अपेक्षा तीन-चौथाई कीमत में मिल रही थी। इसके बाद उसने सोचने की कोशिश नहीं की कि आखिर क्यों मतलू सिंह उसे इतनी सस्ती बुंदिया बेच रहा था। मैंने घर जाकर सारी बात माँ को बताई। लेकिन माँ को देखकर नहीं लग रहा था कि वो मेरी बातों को गंभीरता से सुन रही थी। मैंने माँ को बोला था कि कुछ ना कुछ तो जरुर गड़बड़ है।

रात में ग्यारह बजे अचानक माँ ने मुझे जगाया। गाँव में कहीं शोर हो रहा था। मैं छत पे गया तो साफ पता चल रहा था कि आवाज ललन के घर से आ रही थी। मैंने देखा कि अगल-बगल के लोग ललन के घर की ओर जा रहे थे तो मैं भी टॉर्च लेकर गया। करीब आधे घंटे बाद मैं लौटकर आया तो तो माँ को देखकर पता चल रहा था कि माँ को घटना की विस्तृत जानकारी मिल चुकी थी। मैं बोलना चाह रहा था कि आप के लिए तो अच्छा ही हुआ न। अब तो ललन यहाँ वापस आने से रहा और अब आपको गली में आते जाते छुआ जाने का डर भी नहीं रहेगा। लेकिन माँ के चहरे को देखकर बोलने का साहस नहीं हुआ।

अगले दिन समाचार-पत्र में छपा था। "इन्दुपुर गाँव के एक ही घर में शादी के अवसर पे जहरीली बुंदिया खाने से?„ लोगों की मौत और 6 गंभीर हालत में अस्पताल में भर्ती। गाँव का ही मतलू सिंह गिरफ्तार।" धीरे-धीरे गाँव में यह बात फैल गई कि मतलू सिंह ने डोम को वो बुंदिया बेच दी जिसमे गलती से कीटनाशक गिर गई थी।

पवन सैनी
शोध छात्र

सच्चा मित्र

मित्र को बंधु, सखा या दोस्त भी कहते हैं। जो सहायक हो, सुख-दुख का साथी हो और शुभचिंतक हो, वही सच्चा मित्र है। हर समय साथ रहने वाला मनोरंजन के आयोजनों में सहभागिता करने वाला और बड़ी मधुर तथा लच्छेदार भाषा में आपके साथ बतियानेवाला आपका मित्र भी हो, यह आवश्यक नहीं है। ऐसा भी हो सकता है कि कोई व्यक्ति हमसे कभी-कभार ही मिलता हो, लेकिन जब-तब हमारे हित के बारे में चिंतन करता हो। यह भी संभव है कि ऐसा व्यक्ति बातचीत में हमें अपने बहुत निकट न लगे। जो व्यक्ति छाया की तरह हमारे चारों तरफ मँडराते रहते हैं और जो कभी-कभार किसी खास मकसद से हमसे भेंट करते हैं-इन दो भिन्न प्रकृति के लोगों के बारे में हम कैसे जान सकेंगे कि कौन हमारा हितैषी या मित्र है और कौन ऐसा व्यक्ति है जो अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए हमसे संपर्क बनाए रखता है। इसी बात की कसौटी है विपदा यानी विपत्ति। जब हमारे पास धन-दौलत, पद और अधिकार होते हैं, तब तो कोई भी मित्रता का हाथ बढ़ाएगा, लेकिन इन सबके छिन जाने पर और स्वास्थ्य का ह्रास हो जाने पर जो हमारा साथ देता रहेगा, मित्र केवल हम उसे ही कहेंगे। मित्रता दूध और पानी की देखिए! दूध को कितना ही तपाते रहिए, पानी उसका साथ नहीं छोड़ेगा-अपने अस्तित्व को नष्ट करके वह दूध को और गाढ़ा करता जाएगा। पानी और मीन की मित्रता को देखिए! पानी का बिछोह उसे बरदाश्त नहीं है-वह तड़प-तड़पकर अपने प्राण त्याग देती है। कविवर तुलसीदास ने भी कहा है-धैर्य, धर्म, मित्र और नारी की परख विपत्ति काल में ही होती है। पिता, पुत्र, भाई, बहन, सहपाठी, सहकर्मी, संबंधी-कोई भी मित्र की भूमिका का निर्वाह कर सकता है। इनमें से जो भी व्यक्ति जीवन के संकटकाल में हमारे साथ रहता है वही हमारा सच्चा मित्र है। कविवर रहीम ने भी विपत्ति को सच्चे मित्र की पहचान कसौटी बताया है-

रहिमन विपदा हू भली जो थोड़े दिन होय।
हित अनहित या जगत में जान पड़त सब कोय।।

हृदय रोग – कारण एवं निदान

उम्र की औसत आयु के बढ़ने और अनियमित जीवन शैली में परिवर्तन के कारण आज अनेक प्रकार की नई-नई और घातक बीमारियों का जन्म हुआ है। हृदय-रोग एक ऐसी ही बीमारी है जो इक्कीसवीं सदी में मृत्यु का एक महत्वपूर्ण कारण बनकर उभर रही है। इसका उपचार भी महँगा है और कई बार अच्छी से अच्छी चिकित्सा सुविधाओं के रहते हुए भी हम हृदय-रोग से ग्रसित व्यक्ति को काल का ग्रास बनने से नहीं रोक पाते। अच्छी बात यह है कि जीवन शैली के बदलाव से इससे काफी हद तक बचा जा सकता है हृदय रोग का प्रमुख कारण है तनाव और तनाव के अनेकों कारण हैं। जैसे:

➔ अड़ोसी-पड़ोसी की सुख-सुविधा एवं संसाधनों से अपनी तुलना करना तथा आगे बढने की होड़ के कारण गलत मार्ग का अनुसरण करना।
➔ टी.वी., वीडियो गेम, मोबाइल फोन, नये-नये फैशन की नकल करना तथा निरर्थक समय बरबाद करना।
➔ विज्ञापन से प्रेरित होकर गलत खान-पान, रहन-सहन आदि के प्रति आकर्षित होना और अनुचित आहार-व्यवहार करना।
➔ फिल्म, फैशन, फूड विज्ञापन आदि की नकल करना, जो स्वास्थ्य एवं चरित्र दोनों के लिए नुकसानदेह है।
➔ नियमित, संयमित और अनुशासित जीवनचर्या का सर्वथा अभाव।
➔ स्वास्थ्य एवं सुसंस्कार की शिक्षा का अभाव।
➔ जीवन के हर क्षेत्र में येन-केन-प्रकारेण आगे बढ़ने की ख्वाहिश।
➔ कम से कम समय में अधिक से अधिक धन-सम्पदा और भौतिक सुविधाओं की भूख।

➔ आत्मसंतुष्टि के बजाय अत्यधिक कामनाएं, इच्छा से अधिक की कल्पना, क्रोध का होना, राग, द्वेष, ईर्ष्या, घृणा आदि होना।
➔ ईश्वर पर विश्वास, ईमानदारी, सत्य, अहिंसा, दया, क्षमा, सहनशीलता आदि सद्गुणों का न होना।
➔ परिवार और समाज के प्रति दायित्व-बोध का अभाव।
➔ चैन से आनन्दित होकर नियमित समय पर शुद्ध सात्विक पौष्टिक आहार-विहार व कम से कम 6 घंटे निद्रा आदि का अभाव।
➔ शारीरिक श्रम का अभाव, मानसिक चिंता, परेशानी, निद्रा एवं पाचन शक्ति का कम से कमतर होना।

उपर्युक्त आजकल की सामान्य बातें हैं जिनके कारण व्यक्ति बचपन से ही परेशान रहने लगता है, फलस्वरूप शरीर की बर्दाश्त करने की क्षमता (इम्यूनिटी) घटने लगती है और 35-40 वर्ष की आयु होते-होते आदमी शारीरिक एवं मानसिक रोगों से ग्रस्त हो जाता है। नतीजतन, विभिन्न कारणों से हृदय रोग से ग्रसित हो जाता है।

निदान – बिना डॉक्टर के पास जाए भी इसकी रोकथाम सम्भव है। जैसे इसके कारण सामाजिक और मनोवैज्ञानिक हैं वैसे ही इसकी रोकथाम भी गैर-चिकित्सकीय विधि से संभव है।

क्या करें -

➔ दिनचर्या नियमित करें अर्थात् निश्चित समय पर सोयें-जागें तथा संतुलित भोजन करें।
➔ संतुलित भोजन में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, मिनरल्स-साल्ट (खनिज पदार्थ), मौसम के अनुसार हरी शाक भाजी तथा फलों से प्राप्त होते हैं, का सेवन करें।
➔ वसा के रूप में तेल घी की मात्रा अधिक नहीं होनी चाहिए। जो मांसाहार न करने से भी कम होगा।
➔ हृदय रोग से ग्रसित व्यक्ति नित्य सुबह-शाम 30 मिनट तीव्र गति से टहलें, शारीरिक व यौगिक व्यायाम करें, प्राणायाम करें, ध्यान करें।
➔ नियमित-ब्लड प्रेशर एवं शुगर की जाँच करायें।
➔ अगर दवा चल रही है तो नियमित रूप से लेते रहें।
➔ सुबह-सबेरे खाली पेट लहसुन लेते रहे।
➔ 4-5 बादाम अथवा 2 अखरोट नियमित रूप से लें।
➔ सुबह शाम ईश्वर में विश्वास के साथ 15 मिनट से 30 मिनट तक शांत वातावरण में ध्यान करें।

- ईमानदारी और सार्थक परिश्रम से जो कुछ भी उपार्जन हो, उसी में संतुष्ट रहकर जीने की कला अपनावें।
- इच्छाओं को विवेक बुद्धि के द्वारा संयमित करें ताकि अनावश्यक तनाव से मुक्त रह सकें।
- क्रोध, लोभ, राग, द्वेष से भरसक बचे रहें तो सदैव ही प्रसन्न रहेंगे और प्रसन्नता से कभी कोई कष्ट नहीं होता।
- अपने परिवार एवं समाज के प्रति दायित्व का निर्वाह करें।
- पाश्चात्य संस्कृति का परित्याग कर भारतीय संस्कृति का ही अनुपालन व अनुसरण करें तथा "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।" अर्थात् सब सुखी हों, सभी निरोग हों, सबका भला हो, कल्याण मंगल हो, यही कामना ईश्वर से करें।

'आयुष' के अन्तर्गत भारत सरकार ने वैकल्पिक तथा पूरक उपचारों की ओर काफी ध्यान दिया है। यदि आप सावधान रहें तो जीवन शैली और व्यवहार में परिवर्तन लाकर आप भी हृदय रोगों से काफी सीमा तक अपनी रक्षा कर सकते हैं। पुराने रोगों के निदान और उनसे जनित अन्य समस्याओं में होम्योपैथी काफी कारगर चिकित्सा पद्धति सिद्ध हुई है। आवश्यकता पड़ने पर होम्योपैथी का भी सहारा ले सकते हैं। होम्योपैथी रोग को समूल नष्ट करती है, एलोपैथी की भाँति केवल लक्षणों की समाप्ति ही इसका लक्ष्य नहीं है।समय रहते किसी योग्य चिकित्सक से मिलें। लोकप्रिय पत्रिकाओं, विज्ञापनों और होम्यो-स्टोर्स के परामर्श से स्वयं ही औषधि का सेवन न करें। ऐसा करने पर हानि भी हो सकती है। इसी हेतु यहाँ किसी विशेष औषधि का नाम नहीं दिया जा रहा है। सभी स्वस्थ एवं प्रसन्न रहें।

डॉ एस के मिश्रा
होम्यो चिकित्सक
स्वास्थ्य केन्द्र

रोचक जानकारी

सन् 1921 में गाँधीजी ने राष्ट्रीय ध्वज पर यंग इंडिया में एक लेख लिखा था, उसमें भी गाँधी जी ने भारत के राष्ट्रीय ध्वज के वस्त्र के लिए खादी को ही चुना था। कारण कोई भी रहा हो, यही निर्णय लिया गया कि राष्ट्रीय ध्वज के निर्माणार्थ जो वस्त्र उपयोग में लाया जाएगा, वह खद्दर का होगा, चाहे यह सूती-ऊनी या सूती-रेशमी खादी का हो।

विशेष विवरण में यह भी बताया कि ध्वज-निर्माण में सिलाई के लिए काम में लाए जाने वाले केसरी, सफेद व हरे रंग के धागे भी खादी के ही होने चाहिए। सभी धागे अच्छी तरह काते गए और उमेठे हुए होने चाहिए। उनमें कोई गाँठ नहीं पड़ी होनी चाहिए तथा उनमें अन्य कोई दोष भी नहीं होना चाहिए।

22 जुलाई, 1947 को संविधान सभा के सामने पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा राष्ट्रीय ध्वज के साथ दो ध्वज-एक सूती तथा दूसरा रेशमी-खादी का भी प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया था। इन दोनों ध्वजों में से सूती ध्वज थल सेना कार्यालय के माध्यम से भारतीय संस्थान को सौंप दिया गया था। इस मूल ध्वज के अनुरूप व आधार पर संस्थान ने उस ध्वज के रंगों की स्पेक्ट्रोफोटोमैटिक मूल्यांकन कानपुर स्थित तत्कालीन तकनीकी डेवलेपमेंट इस्टेब्लिशमेंट लेबोरेटरी (स्टोर्स) कानपुर में, अंतरराष्ट्रीय कमीशन 1931 द्वारा निर्धारित मानकों के आधार इलूमेंट-सी का उपयोग करके किया और उस ध्वज के रंगों का मूल्यांकन एवं ब्योरा इस प्रकार निर्धारित किया-

ट्राइक्रोमेटिक मान

रंग	एक्स (X)	वाई (Y)	जेड (Z)	चमक %
भारतीय केसरी	0.538	0.360	0.102	21.5
भारतीय हरा	0.288	0.395	0.317	8.9
सफेद	0.313	0.319	0.368	72.6

वह मूल ध्वज अब चीफ इंस्पेक्टर, चीफ इंस्पेक्ट्रेट ऑफ टेक्सटाइल एंड क्लोदिंग, कानपुर में सुरक्षित रखा है।
अत: सभी राजकीय झंडे अनिवार्यत: भारतीय मानक संस्थान द्वारा नियत उपर्युक्त विवरण के अनुरूप ही बने होने चाहिए।

स्रोत- तिरंगे की गौरव गाथा, ले. कमांडर के. वी. सिंह

17th internationa
heat pipe confere

ACADEMIC EXCELLENCE

Institute

KANPUR

छंद

'छंद' शब्द की व्युत्पत्ति 'छद्' धातु से मानी गयी है। इसका अर्थ आवृत्त करना, रक्षित करना तथा प्रसन्न करना भी होता है। प्रसन्न करने के ही अर्थ में निघुंट में 'छंद' धातु भी मिलती है। कुछ विद्वानों का मत है कि इसी से छंद शब्द को संबद्ध मानना अधिक युक्तिसंगत है। कविता में जब निश्चित वर्ण अथवा मात्रा का विधान कर उसकी सृष्टि होती है तो वह सृष्टि 'छंद' कहलाती है। छंद कविता की बाह्य वस्तु ही नहीं बल्कि उसका आवश्यक अंग भी है। छंद कवि की सहज अभिव्यक्ति होती है। छंद कविता का अंतर संवारता हुआ बाह्य को भी संवारता है। यद्यपि यह विषय आज भी विवादास्पद है कि छंद के द्वारा काव्य का उत्कर्ष होता है या अपकर्ष। किंतु इतना अवश्य है कि छंद कविता को सजाने की एक शक्ति होती है।

वेद के छह अंगों में छंद भी एक अंग है। पिंगलाचार्य के 'छंदःसूत्र' और 'अग्निपुराण' में छंदों के दो विभाग किए गए हैं-एक वैदिक और दूसरा लौकिक। वैदिक साहित्य में प्रयुक्त छंद लौकिक माने गए हैं।

छंदों की उत्पत्ति, आचार्य परंपरा, भेद-प्रभेद, गति, लक्षण, उदाहरण, वर्गीकरण आदि विविध पक्षों का निरूपण करनेवाला शास्त्र 'छंद शास्त्र' या 'पिंगल शास्त्र' कहलाता है। छंद शास्त्र की व्यवस्थित परंपरा का सूत्रपात पिंगलाचार्य के 'छंदसूत्र' से ही माना जाता है। जिनका समय ई. पू. 200 के लगभग कहा जाता है। इसके अलावा भरत के 'नाट्य शास्त्र', 'अग्निपुराण', हलायुध कृत 'छंदशास्त्र', क्षेमेंद्र कृत 'सुवृत्त तिलक', गंगादास कृत 'छंदोमंजरी', केदारभट्ट कृत 'वृत्त रत्नाकर' दामोदर मिश्र कृत 'वाणी भूषण' तथा प्राकृत ग्रंथ 'प्राकृत पैंगलम्' आदि ग्रंथो में छंदों की विस्तृत चर्चा है।

हिंदी छंद शास्त्र पर रीतिकाल में अनेक ग्रंथ लिखे गए, जिनमें मतिराम कृत 'छंदसार पिंगल', चिंतामणि कृत 'छंद विचार', सुखदेव कृत 'वृत्त विचार', माखन कृत 'छंद विलास', नारायण दास कृत 'छंदसार', भिखारीदास कृत 'छंदार्णव' कलानिधि कृत 'वृत्त चंद्रिका', पद्माकर कृत 'छंद सार मंजरी', गदाधर भट्ट की 'छंदोमंजरी' तथा जगन्नाथ प्रसाद भानु का 'छंद प्रभाकर' उल्लेखनीय है। इस तरह छंद शास्त्र प्रणयन की लगभग अखंड परंपरा वर्तमान समय तक चली आती हुई दिखायी देती है।

छंद एक प्रकार की काव्य-व्यवस्था भी है जिसमें ध्वनि, वर्ण, मात्रा, लघु, गुरु तुक, यति आदि की व्यवस्था का विधान होता है। हिंदी में तीन प्रकार के छंद माने जाते हैं-वर्णिक छंद, मात्रिक छंद और मुक्त छंद।

वर्णिक छंद उन्हें कहते हैं जिनके प्रत्येक चरण का निर्माण वर्णों या अक्षरों की एक नियमित संख्या एवं व्यवस्था से होता है। जैसे-

''सुनि मुनि राई/जग सुख दाई/
कहि अब सोई/जेहि यश होई।''

इंद्रवज्रा, उपेंद्रवज्रा, वंसततिलका, वंशस्थ, सुंदरी या मनोरम, मनहरण कवित्त, रूप घनाक्षरी, देवघनाक्षरी, तोटक, द्रुतबिलंवित, मालिनी, मंदाक्रांता, शिखरणी, अनुष्टुप, मत्तगयंद, दुर्मिल, भुजंगप्रयात आदि प्रमुख वर्णिक छंद हैं।

मात्रिक छंद में मात्राओं का निश्चित एवं नियमित विधान होता है। इसमें वर्णों की सख्या कम या अधिक हो सकती है किंतु प्रत्येक पंक्ति में उतनी ही मात्रायें होंगी जितनी प्रथम में होंगी। जैसे-

शशि मुख पर घूंघट डाले अंचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूली में कौतूहल से तुम आये''।

मात्रिक छंदो में चौपाई, रोला, रूपमाला, गीतिका, हरिगीतिका, बरवै, दोहा, कुडंलिया, सोरठा, उल्लास, पद्धरि, छप्पय, त्रिभंगी, तोमर, आर्या आदि प्रमुख हैं।

मुक्त छंद में न तो मात्रा का विधान होता है और न वर्णों का। इसी से इसे मुक्त छंद कहते है। इसमें लय का विधान रहता है जैसे-

''बीती विभावरी जाग री/
अम्बर पनघट में डुबो रही/
ताराघट ऊषा नागरी''।

मुक्त छंद के पहले प्रभावशाली कवि निराला हैं। निराला ने इसके सर्मथन में विस्तार से लिखा भी है। निराला के बाद मुक्त छंद के प्रयोग का मार्ग प्रशस्त हो गया और आज के अधिकांश कवि मुक्त छंद में ही कविता करतें हैं।

छंदो की व्यवस्था में वर्ण तथा मात्रा की संख्या का ही विचार नहीं किया जाता अपितु उसकी गति भी देखनी पड़ती है। गति का अभिप्राय है प्रवाह। वर्णों के क्रम को बदल देने पर उसकी मात्राओं तथा वर्ण-संख्या में तो कोई अंतर नहीं पड़ता किंतु उसकी गति भंग हो जाती है और उसके पढ़ने में पूर्ववत् आनंद नहीं आता जैसे-

''प्रियपति वह मेरा प्राण प्यारा कहां है?''

यदि वर्णों के क्रम को इस प्रकार कर दिया जाये- '' मेरा प्राण प्यारा वह प्रियपति कहां है?'' तो इसके पढ़ने में पहले जैसा आनंद नहीं आ सकता।

इसी तरह छंद में गण का भी महत्व होता है। तीन-तीन वर्णों के समूह को गण कहतें हैं। वर्णों के लघु और दीर्घ के विचार से गणों की संख्या आठ मानी गयी है।

'यमाताराजभानसलगम्' नामक इस सूत्र में किसी भी गण के लघु-गुरू के क्रम सरलता से ज्ञात हो जाएगा। एक गण तीन वर्णों का होता है। एक बार तीन वर्ण ले लेने पर प्रथम अक्षर के नाम पर गण बन जायेगा। इसी प्रकार आठों गणों के स्वरूप बन जातें हैं जैसे यगण, मगण, तगण, रगण आदि।

प्रत्येक छंद में अनेक स्थानों पर विश्राम अथवा विराम के नियम बने होतें हैं, जहां पर पाठक की जिह्वा को विश्राम प्राप्त होता है। इन्हीं विश्रामस्थलों को छंदशास्त्र में यति कहा जाता है, जैसे

'सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे।'

यहां पर बैन के बाद यति है।

पिंगल के अनुसार कुछ वर्ण शुभ और अशुभ कहे गये हैं। क, ख, ग, घ, च, छ, ज, त, द, फ, न, य, श, स और क्ष-ये पंद्रह वर्ण शुभ कहे गये हैं शेष 19 वर्ण अशुभ। जिनमे से वर्ण झ, भ, र, ष, और -'ह' बहुत ही अशुभ कहे गये हैं। उन्हें दग्धाक्षर कहतें हैं।

इस तरह छंद शास्त्र का इतिहास जितना पुराना है उसका फलक उतना ही व्यापक। परंतु आधुनिक काल में पिंगल शास्त्र का महत्व तेजी से घटा है और आज छंद में बंधकर कविता करनें वालों को पिछड़ा समझा जाता है। संभव है भविष्य में पुनः छंदों की वापसी हो क्योंकि आज छंद-लय-विहीन कविता की दुनिया दिन प्रतिदिन सिमटती जा रही है।

साभार- डॉ. अमरनाथ

संदर्भ ग्रंथ- हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली
1. हिंदी साहित्य कोष, भाग-1।
2. भारतीय साहित्य शास्त्र कोष, डॉ-राजवंश सहाय हीरा।
3. काव्यांग प्रकाश, विजयपाल सिंह
4. भारतीय काव्य शास्त्र, योगेंद्र प्रताप सिंह।
5. कविता की मुक्ति, नंदकिशोर नवल।

हिन्दी पत्राचार तथा सरकारी पत्र के प्रकार

सरकारी कार्यालयों में सबसे अधिक प्रयोग पत्राचार का ही किया जाता है। पत्र सरकारी कार्यालयों में उनकी कार्य-पद्धति एवं संप्रेषण-प्रणाली की रीढ़ की हड्डी का कार्य करते हैं। केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में प्रयुक्त पत्रों की रचना-प्रक्रिया, शैली तथा भाषा की अपनी विशिष्ट परम्परा व पद्धति होती है। सामान्यतः सरकारी पत्र विशिष्ट ढर्रे पर चलते हैं, फलतः यह धारणा बलवती होती है कि ऐसे पत्रों में न तो स्वतंत्र विचारों, भावों का स्थान होता है, न स्वतंत्र शैली का आविष्कार किया जा सकता है। परन्तु युग परिवर्तन के साथ जिस प्रकार शासन-प्रणाली बदलती है, उसी प्रकार उसकी कार्य-पद्धति में भी बदलाव आना जरूरी है। इक्कीसवीं सदी की दहलीज पर खड़े भारतवर्ष में अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। ऐसे में दो सौ वर्ष पुरानी शासकीय पद्धति, उसकी शैली एवं भाषाभिव्यक्ति को भी बदलना आवश्यक हो जाता है। अतः सरकारी पत्राचार के रूढ़ परम्परावादी ढ़र्रे को बदलकर स्वतंत्र शैली एवं युगानुरूप भाषाभिव्यक्ति को तरजीह दी जानी चाहिए। पत्र-व्यवहार एक कला है। पत्राचार सम्प्रेषण का एक जबरदस्त माध्यम ही नहीं, अपितु सम्पर्क का प्रभावी साधन भी है। अतः प्रभावशाली पत्र लिखने के लिए कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं की ओर ध्यान देना आवश्यक हो जाता है।

सरलता: आदर्श पत्र-लेखन की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि वह दुर्बोध नहीं होता, अर्थात पत्र में सरलता का होना नितांत आवश्यक है। पत्र द्वारा कही जाने वाली बातों एवं तथ्यों को सीधे ढंग से और स्पष्ट रूप से कहा जाना चाहिए। पत्र द्वारा पांडित्य-प्रदर्शन नहीं किया जाना चाहिए।

स्पष्टता: पत्र में लम्बे वाक्य-विन्यास तथा अत्यन्त कठिन शब्दों का कभी भी उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। ध्यान रहे कि पत्र चाहे व्यक्तिगत हो, सरकारी हो या व्यापारिक-विद्वता-प्रकटीकरण का माध्यम नहीं है। पत्र तो प्रचलित शब्दों और छोटे-छोटे वाक्यों की सहायता से ही प्रभावपूर्ण बन सकता है। अतः पत्र में स्पष्टता का होना नितांत आवश्यक है।

संक्षिप्तता: कोई भी कार्यालयीन पत्र संक्षिप्त होना बहुत जरूरी है। संक्षिप्तता पत्र की प्रभावोत्पादकता कही जा सकती है। सरकारी पत्र में अवांतर बातें न लिखकर सन्दर्भ एवं प्रसंगानुरूप केवल आवश्यक बातों को ही सीधे ढंग से लिखा जाना चाहिए। पत्र में बातों एवं तथ्यों को घुमा-फिराकर कहने और एक ही बात को बार-बार दोहराने की आवश्यकता नहीं है।

शिष्टता: कार्यालयीन पत्र ही नहीं, अपितु सभी प्रकार के पत्र-लेखन की भाषा शिष्ट तथा विनम्र होनी चाहिए। पत्र द्वारा किसी बात को नकारात्मक भी कहना हो, तो उसे विनम्रतापूर्वक ही कहा जाना चाहिए।

प्रभावोत्पादकता: शासकीय पत्र में भाषा, पद-विन्यास, वाक्य-विन्यास, विचार तथा भावों की ऐसी सुगठित अन्विति होनी चाहिए जिससे पत्र का एक संकलित प्रभाव प्रेषिती के मन पर पड़ सके। पत्र-लेखन में प्रभावोत्पादकता लाने के लिए पत्र-लेखक को शासकीय कार्यप्रणाली, सरकारी नीति तथा सम्बन्धित विषय की गहरी समझ होनी चाहिए।

सरकारी पत्राचार के प्रकार की जानकारी होनी चाहिए।

केन्द्रीय सरकार अथवा राज्य सरकार के विभिन्न कार्यालयों में अनेक स्तरों पर पत्राचार का प्रयोग किया जाता है। सरकारी पत्राचार के अनेक प्रकार होते हैं जिनमें प्रमुख है:

- **सरकारी पत्र (Official Letter)** – सरकारी कार्यालयों में सरकारी प्त्र का महत्वपूर्ण स्थान है। सरकारी पत्रों का प्रयोग विभिन्न कार्यालयों,संस्थाओं,निकायों,निगमों, सार्वजनिक उद्योगों, बैंकों तथा कम्पनियों के साथ सम्पर्क तथा दूरसंचार के उपयुक्त माध्यम के रूप में किया जाता है। सरकारी पत्र प्रायः उत्तम पुरुष में ही लिखे जाते हैं। सरकारी पत्र में तथ्यों तथा स्थितियों को उनके मूल रूप में यथास्थिति रखा जाना अत्यावश्यक होता है। ऐसे पत्रों की भाषा सरल, सुबोध तथा स्पष्ट होनी चाहिए तथा पत्रों में लोकोक्तियों, मुहावरों व कहावतों का प्रयोग बिलकुल नहीं किया जाना चाहिए। सरकारी पत्र का सम्बोधन सामान्यतया 'महोदय' से आरम्भ होता है। सभी प्रकार के सरकारी पत्रों के अधोलेख के रूप में 'भवदीय' लिखा जाता है। सामान्यतः सरकारी पत्र विदेशी सरकारों, राज्य सरकारों, सम्बद्ध और अधीन कार्यालयों और संघीय लोक सेवा आयोग जैसे अन्य कार्यालयों से समस्त औपचारिक पत्र-व्यवहार के लिए प्रयुक्त होते हैं।
- **अर्धसरकारी पत्र (Demi & Official Letter)** – अर्ध सरकारी पत्र भी सरकारी कामकाज के सिलसिले में ही लिखा जाता है किन्तु इसका लेखक कार्यालयीन कामकाज के बारे में कई बातें व्यक्तिगत रूप में भी लिख सकता है ताकि प्रस्तावित कार्य को व्यक्तिगत रूचि से तुरंत निपटाया जा सके। इन पत्रों में विचारों के आदान-प्रदान के लिए विशेष शासकीय औपचारिकता के निर्वाह करने की आवश्यकता नहीं होती। अर्द्धसरकारी पत्र में लेखक का व्यक्तित्व झलकता है और इनके माध्यम से काफी हद तक अपनत्व भी प्रकट किया जा सकता है। अर्द्धशासकीय पत्रों की भाषा आदरसूचक होनी चाहिए तथा उनमें आदेशात्मक वाक्यों का प्रयोग वर्जित होना चाहिए। ऐसे पत्रों में सम्बोधन के तौर पर नाम का प्रयोग किया जाता है तथा नाम से पहले 'प्रिय', 'प्रियवर' अथवा 'प्रिय श्री' आदि जोड़ा जाता है। पत्र पूरा होने पर पत्र का प्रेषक हस्ताक्षर करता है किन्तु नाम या हस्ताक्षर के नीचे प्रेषक का पदनाम नहीं लिखा जाता है।
- **कार्यालय ज्ञापन (Office Memorandum)** – कार्यालय ज्ञापन का प्रयोग भारत सरकार के मंत्रालयों के आपसी पत्र-व्यवहार एवं सूचना आदि के लिए होता है। यह हमेशा अन्य पुरुष (Third person) में लिखा जाता है। इसमें सम्बोधन या अधोलेख नहीं होता सिर्फ लिखने वाले का पदनाम और हस्ताक्षर होता है। कार्यालय ज्ञापन में यदि एक से अधिक अनुच्छेद हों तो पहले अनुच्छेद पर क्रमांक न देकर उसके बाद के अनुच्छेदों पर क्रमांक दिये जाते हैं। इसके वाक्य सामान्यतः कर्मवाचक ही होते हैं – "किया जाता है", "किया गया था", "किया जायेगा" आदि।

परिपत्र (Circular) – सरकारी पत्राचार का एक अत्यंत महत्वपूर्ण माध्यम परिपत्र होता है । परिपत्रों के माध्यम से विभिन्न मंत्रालयों तथा मंत्रालयों तथा विभागों द्वारा उनके अधीनस्थ कार्यालयों, संलग्न अनुभागों, प्रभागों आदि को सरकारी सूचनाएँ, आदेश, अनुदेश तथा निर्देश आदि भेजे जाते हैं । परिपत्र की एक विशेषता यह होती है कि इसका प्रेषक एक ही होता है, विषय-वस्तु भी एक ही होती है किन्तु आवश्यकतानुसार इसे बहुत से अधीनस्थ तथा संलग्न कार्यालयों के नाम भी भेजा जा सकता है । हिन्दी परिपत्र मूल रूप में तैयार करते समय निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए-

1 परिपत्र अन्य पुरुष (Third person) में लिखा जाना चाहिए।

2 परिपत्र में प्रयुक्त की जाने वाली भाषा तथा वाक्य-रचना आसान होनी चाहिए।

3 तीव्र संप्रेषण के लिए परिपत्र संक्षिप्त एवं विषयानुसार होने चाहिए।

- कार्यालय आदेश (Office Order) – कार्यालय आदेश का प्रयोग किसी मंत्रालय, सम्बद्ध विभाग, प्रभाग, अनुभाग अथवा कार्यालय के कर्मचारियों के लिए सरकारी प्राधिकारी द्वारा सम्बन्धित कार्य हेतु किया जाता है। कार्यालय आदेश का उपयोग कर्मचारियों का स्थानांतरण, पदोन्नति करने या रोकने, वेतनवृद्धि जारी करने, अवकाश मंजूर करने तथा अधिकारी और अनुभागों के बीच कार्य के वितरण आदि के लिए भी किया जाता है। कार्यालय आदेश का स्वरूप चूंकि आदेशात्मक होता है, उसका अनुपालन करना सम्बन्धित कर्मचारियों का परम कर्तव्य हो जाता है। कार्यालय आदेश हमेशा उत्तम पुरुष एक वचन में जारी किये जाते हैं। इसमें सम्बोधन अथवा स्वनिर्देश की औपचारिकता नहीं बरती जाती।
- संकल्प (Resolution) – संकल्प केवल सरकार की ओर से जारी किया जाता है । संकल्प का प्रयोग नीति सम्बन्धी महत्वपूर्ण सरकारी निर्णयों की घोषणा करने तथा सरकारी नीतियों की सार्वजनिक उदघोषणा करने हेतु किया जाता है । संकल्प की भाषा विषय-वस्तु के अनुरूप ही होती है ।
- अधिसूचना (Notification) – सरकारी अधिसूचनाएँ सामान्यतः भारत के राजपत्र में प्रकाशित होती है । अधिसूचनाओं में सरकारी आदेशों, नीतियों व नियमों के लागू होने, किसी विशिष्ट व्यक्ति को अधिकार प्रदान करने और केन्द्रीय सरकार आदि के राजपत्रित अधिकारियों की नियुक्तियों एवं स्थानांतरणों आदि के सम्बन्ध में सूचनाएँ दी जाती हैं । अधिसूचनाओं में किसी भी प्रकार का सम्बोधन तथा पत्र की अन्य औपचारिकताओं का निर्वाह नहीं होता । अधिसूचना को हमेशा अन्य पुरुष में लिखा जाता है तथा इसमें मंत्रालय का नाम, भेजने वाले के हस्ताक्षर, पदनाम, दिनांक एवं अधिसूचना संख्या का उल्लेख मुख्य रूप से किया जाता है ।
- प्रेस विज्ञप्ति (Press Communique) – केन्द्रीय सरकार के निर्णयों, आदेशों, प्रस्तावों तथा नीतियों आदि को सार्वजनिक तौर पर प्रसारित एवं प्रचारित करने की उद्देश्य पूर्ति के लिए प्रेस विज्ञप्ति का प्रयोग किया जाता है । इसे प्रमुख समाचार पत्रों में ज्यों-की-ज्यों यथास्थिति प्रकाशित किया जाता है चूँकि उसका स्वरूप अत्याधिक औपचारिक होता है । प्रेस विज्ञप्ति चूँकि सूचनात्मक होती है, अतः इसमें सम्बोधन अथवा अधोलेख आदि औपचारिक बातें नहीं होती ।
- अनुस्मारक (Reminder) – इसे स्मरण पत्र भी कहा जा सकता है। अनुस्मारक के लिए पत्र का वही रूप प्रयुक्त किया जाता है जिसमें मूल पत्र प्रेषित किया गया था । जब मूल पत्र के अनुसार कार्यवाही समय पर न की गई हो अथवा माँगी गई जानकारी समयावधि में न भेजी गई हो तब सम्बन्धित अधिकारी को कार्य का स्मरण दिलाने के लिए अनुस्मारक का प्रयोग किया जाता है ।
- प्रतिवेदन (Report) – सरकारी कामकाज के प्रमुख अंग के रूप में जाँच, तथ्यान्वेषण, सुझाव आदि के विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने की प्रणाली को प्रतिवेदन या रिपोर्ट कहा जाता है । प्रतिवेदन में वह सूचना या जानकारी प्रस्तुत की जाती है जो सार्वजनिक रूप में यथातथ्य ज्ञात नहीं होती किन्तु प्रतिवेदन प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति या आयोग या समिति उसे सम्बद्ध व्यक्तियों या सरकार तक तथ्यों को यथास्थिति प्रस्तुत करते हैं। उसमें प्रस्तुत की जाने वाली सभी बातें क्रमबद्ध रूप से दी जाती हैं ।

साभार : प्रयोजनमूलक हिन्दी, सिद्धान्त और प्रयोग (डॉ. दंगल झाल्टे)

काम क्रोध मद लोभ की, जब लग घट में खान।
कबीर मूरख पंडिता, दोनों एक समान।।

कबीर जी कहते हैं कि तब तक मूर्ख और पंडित दोनों एक जैसे हैं जब तक शरीर में काम, क्रोध, लोभ, मद और मोह जैसे विकार हैं। क्योंकि अज्ञानी तो न जानने के कारण इन विकारों से घिरा है, यदि ज्ञानी ने इन विकारों को जान कर भी इनसे अपने को नहीं बचाया और उसी प्रकार कर्म करता है तो उसके ज्ञान का क्या लाभ?

सन्त कबीर

एक प्रयास

इस बार जब हिंदी साहित्य सभा के समन्वयक की हैसियत से अंतस पत्रिका के लिए कुछ लिखना हुआ तो विचार किया कि क्या लिखा जाये? बहुत सोचा, लेकिन सत्रांत परीक्षाओं के दबाव से छूटे हुए दिमाग के अनवरत और अनायास मंथन की अंतिम परिणति ये रही कि हर बार की तरह सभा की गतिविधियों का मैनिफेस्टो भर दिखा देना ठीक नहीं लगा, तो इसलिए इस बार कुछ नया, कुछ अलग लिखने की इच्छा बनी विषय बना "अंतस्" और साहित्य सभा के परिपक्व होते संबंधों की पूरी यात्रा के सम्बन्ध में दो बातें ध्यान खींचती हैं पहली तो ये कि "अंतस्" ने सभा की साहित्यिक प्रतिभा को मंच दिया जो "अंतस्" के प्रथम अंक से पहले उपलब्ध नहीं था। सभा या संस्थान में मौलिक लिखने वाले लोग जो भी लिखते थे उसे अपनी डायरी में सुरक्षित रखने को विवश थे। "अंतस्" ने उस लिखाई को साहित्य प्रेमियों और हिंदी भाषी समूह के सामने प्रस्तुत करने का मौका दिया।

दूसरी बात ये कि "अंतस्" के हर अंक के साथ सभा और राजभाषा प्रकोष्ठ के सम्बन्ध भी मजबूत हुए हैं। निश्चित रूप से इसे सभा के पूर्व समन्वयकों मनीष जी और आशीष जी की दूरदर्शिता का ही परिणाम कहा जाना चाहिए कि "अंतस्" के प्रथम अंक से ही उन्होंने इस सिलसिले को शुरू कर दिया था। वैसे भी एक ही ध्येय की ओर प्रयास किया जाना हो तो उस ध्येय की ओर कार्यरत सभी लोगो को एक साथ आना ही चाहिए। पिछले कुछ वर्षों में हमने साथ में कई कार्यक्रम आयोजित किये हैं, जिनमें से कुछ तो अप्रत्याशित स्तर तक सफल हुए हैं। स्वतंत्रता दिवस पर आयोजित काव्य-संध्या के विषय में यही कहा जायेगा जहाँ दर्शक आउटरीच ऑडिटोरियम की सीढ़ियों तक पर बैठकर कार्यक्रम का आनंद ले रहे थे। हमारा ये पारस्परिक सहयोग (और अब तो इसे पारस्परिक समझ कहा जाये तो बेहतर होगा) "अंतस्" से ही प्रारंभ हुआ था।

तो ये दो बातें, मुझे लगता है कि "अंतस्" और सभा के संबंधों को बताती हैं। भले ही सभा ने अपने ब्लॉग 'छंद' (chhand-iitk-blogspot-पद) को संस्थान की रचनाओं के सामूहिक संग्रह के रूप में ऑनलाइन उपलब्ध कर दिया है लेकिन इस कारण से "अंतस्" की भूमिका कम नहीं हो जाती।

अब थोड़ी बात कर्तव्य, कृत और शेष की !

सफलताओं भरा पिछला सत्र –

राजभाषा प्रकोष्ठ के साथ मिलकर काव्य-संध्या के संयुक्त आयोजन की सफलता बताई ही जा चुकी है। संयुक्त आयोजनों में हिंदी पखवाड़ा भी रहा और परीक्षाओं के दौर के बीच भी संतोषजनक सहभागिता के नाते उसे भी सफल आयोजन ही कहा जाना चाहिए।

इस बार भी हर बार की तरह गैर-हिंदी भाषियों के लिए सभा के द्वारा हिंदी कक्षाएं चलायी गयीं हालाँकि इस बार उन्हें दो स्तरों पर चलाया

गया-प्राथमिक और उच्च। निस्संदेह वो सफल रहीं क्योंकि सिखाने वाले और सीखने वाले हमारे सभी साथियों का फीड-बैक बहुत अच्छा मिला। हिंदी शब्द ज्ञान और उच्चारण को बहुत ही सरल तरीके से सिखाने वाली किताब का लेखन सभा के समन्वयक संघ प्रिय ने पूराकर लिया है और प्रोफेसर अरुण शर्मा सर का मार्गदर्शन लेने के बाद अब हम मीडिया काउंसिल के माध्यम से उसे प्रकाशित करवाने की प्रक्रिया में हैं।

एक बड़ा ही महत्वाकांक्षी कार्यक्रम जिसका हमने "अंतस्" के पिछले अंक में आपसे वादा भी किया था-"किरदार", कहानियों का ये रेडियो कार्यक्रम छात्रों और कैंपस के अन्य साहित्य-प्रेमियों के मध्य काफी सराहा जा रहा है। इसके पहले संस्करण में कुल पांच कहानियाँ हैं, पांच कड़ियों में और अब सभा के यू-ट्यूब चैनल (http://www-youtube-com/hindisahityasabha) पर वे उपलब्ध भी हैं। आप जब चाहें , इन्टरनेट के माध्यम से उन्हें सुन सकते हैं।

सफलताएं आगे भी मिलनी है –

सभा अपनी साहित्यिक जिम्मेदारी का निर्वहन सोशल मीडिया के माध्यम से भी कर रही है। हमारे फेसबुक पेज पर प्रतिदिन की साहित्यिक गतिविधि के कारण हमसे जुड़ने वाले लोगों की संख्या भी बढ़ रही है। ये हमारे लिए ऊर्जा और उत्साह बनाये रखने के लिहाज से बहुत महत्त्वपूर्ण है।

साहित्य के एक नए रूप को गढ़ने, कह सकते हैं ढूँढने का प्रयास है – निर्वाक। बहुत से ऐसे मुद्दे हैं, ऐसी बातें हैं जो हमें प्रत्यक्ष नहीं दिखतीं लेकिन हम पर बड़ा असर डाल रही होती हैं। हम ऐसी ही निर्वाक यानी 'मौन' बातों, मौन मुद्दों को लेकर अपना विचार-पत्र (समाचार-पत्र की पद्धति से अलग) निर्वाक ला रहे हैं। प्रथम संस्करण का विषय-'कॉलेज, युवा और राजनैतिक चेतना' निर्धारित किया गया है। हमें निर्वाक को स्तरीय बनाने के लिए बहुत से विचारशील और विशेष रूप से राजनैतिक रूप से विचारशील लेखकों की आवश्यकता पड़ेगी। यदि आप मीडिया एक्टिविज्म में हमारे साथ हैं या लेखक के तौर पर हमसे जुड़ना चाहते हैं तो हमें मेल जरूर करें– hindisahityasabha-iitk@gmail-com

बहुत सी योजनायें और भी हैं। समय कम है, सत्र की पढाई के दौरान समय अपेक्षाकृत और कम मिल पाता है। अधिक से अधिक योजनाओं को क्रियान्वयित करने का लक्ष्य है, समय से प्रतिस्पर्धा है। देखिये हम आपके सामने और कितना प्रस्तुत कर पाते हैं !

धन्यवाद

समन्वयक

हिंदी साहित्य सभा

बगुला भगत

उपायेन जयो यादृग्रिपोस्तादृड्. न हेतिभि:? अर्थात् उपाय से शत्रु को जीतो हथियार से नहीं

एक जंगल में बहुत सी मछलियों से भरा एक तालाब था। एक बगुला वहां दिन-प्रतिदिन मछलियों को खाने के लिए आता था, किन्तु वृद्ध हने के कारण मछलियों को पकड़ नहीं पाता था। इस तरह भूख से व्याकुल हुआ वह एक दिन अपने बुढ़ापे पर रो रहा था कि एक केकड़ा उधर आया। उसने बगुले को निरंतर आँसू बहाते देखा तो कहा-मामा! आज तुम पहले की तरह आनन्द से भोजन नहीं कर रहे, और आँखों से आँसू बहाते हुए बैठे हो, इसका क्या कारण है?

बगुले ने कहा-मित्र! तुम ठीक कहते हो। मुझे मछलियों को भोजन बनाने से विरक्ति हो चुकी है। आजकल अनशन कर रहा हूँ। इसी से मैं पास में आई मछलियों को भी नहीं पकड़ता।

केकड़े ने यह सुनकर पूछा-मामा! इस वैराग्य का क्या कारण है?

बगुला-मित्र! बात यह है कि मैंने इस तालाब में जन्म लिया, बचपन से ही यहीं रहा हूँ और मेरी उम्र गुजरी है। इस तालाब और तालाबवासियों से मेरा प्रेम है। किन्तु मैंने सुना है कि अब बड़ा भारी अकाल पड़ने वाला है। बारह वर्षों तक वृष्टि नहीं होगी।

केकड़-किससे सुना है?

बगुला-एक ज्योतिषी से सुना है। शनिश्चर जब शकटाकार रोहिणी तारक मण्डल को खण्डित करके शुक्र के साथ एक राशि में जाएगा, तब बारह वर्ष तक वर्षा नहीं होगी। पृथ्वी पर पाप फैल जाएगा। माता-पिता अपनी संतान का भक्षण करने लगेंगे। इस तालाब में पहले ही पानी कम है। यह बहुत जल्दी सूख जाएगा। इसके सूखने पर मेरे सब बचपन के साथी जिनके साथ मैं इतना बड़ा हुआ हूँ, मर जाएंगे। उनके वियोग दुख की कल्पना से ही मैं इतना रो रहा हूँ। और इसीलिए मैंने अनशन किया है। दूसरे जलाशयों से भी जलचर अपने छोटे-छोटे तालाब छोड़कर बड़ी-बड़ी झीलों में चले जा रहे हैं। बड़े-बड़े जलचर तो स्वयं ही चले जाते हैं, छोटों के लिए ही कठिनाई है। दुर्भाग्य से इस जलाशय के जलचर बिलकुल निश्चिन्त बैठे हैं, मानो कुछ होने वाला ही नहीं है। उनके लिए ही मैं रो रहा हूँ। उनका वंश-नाश हो जाएगा।

केकड़ ने बगुले के मुख से यह बात सुनकर अन्य सब मछलियों को भी भावी दुर्घटना की सूचना दे दी। सूचना पाकर जलाशय के सभी जलचरों, मछलियों, कछुओं आदि ने बगुले को घेरकर पूछना शुरू कर दिया-मामा, क्या किसी उपाय से हमारी रक्षा हो सकती है?

बगुला बोला-यहाँ से थोड़ी दूर पर एक प्रचुर जल से भरा जलाशय है। वह इतना बड़ा है कि चौबीस वर्ष सूखा पड़ने पर भी न सूखे। तुम यदि मेरी पीठ पर चढ़ जाओगे तो तुम्हें वहाँ ले चलूँगा।

यह सुनकर सभी मछलियों, कछुओं और अन्य जलजीवों ने बगुले को भाई, मामा, चाचा, पुकारते हुए चारों ओर से घेर लिया और चिल्लाना शुरु कर दिया-पहले मुझे, पहले मुझे।

वह दुष्ट सबको बारी-बारी अपनी पीठ पर बिठाकर जलाशय से कुछ दूर ले जाता और वहाँ एक शिला पर उन्हें पटक-पटककर मार देता था। उन्हें खाकर दूसरे दिन वह फिर जलाशय में आ जाता और नये शिकार ले जाता। कुछ दिन बाद केकड़े ने बगुले से कहा

-मामा! मेरी तुमसे पहले-पहल भेंट हुई थी, फिर भी आज तक मुझे नहीं ले गए। अब तो सभी नये जलाशय तक पहुँच चुके हैं आज मेरा भी उद्धार कर दो।

केकड़े की बात सुनकर बगुले ने सोचा, मछलियाँ खाते-खाते मेरा मन भी ऊब

गया है। केकड़े का माँस चटनी का काम देगा। आज इसका ही आहार करूँगा। यह सोचकर उसने केकड़े को गरदन पर बिठा लिया और चल दिया।

केकड़े ने दूर से ही जब एक शिला पर मछलियों की हड्डी का पहाड़ सा लगा देखा तो वह समझ गया कि यह बगुला किस अभिप्राय से मछलियों को यहाँ लाता था। फिर भी वह असली बात को छिपाकर प्रकट में बोला-मामा! वह जलाशय अब कितनी दूर रह गया है? मेरे भार से तुम काफी थक गये होगे, इसलिए पूछ रहा हूँ।

बगुले ने सोचा, अब इसे सच्ची बात कह देने में भी कोई हानि नहीं है, इसलिए वह बोला-केकड़े साहब! दूसरे जलाशय की बात अब भूल जाओ। यह तो मेरी प्राणयात्रा चल रही थी। अब तेरा भी काल आ गया है। अन्तिम समय में देवता का स्मरण कर ले। इसी शिला पर पटककर तुझे भी मार डालूँगा और खा जाऊँगा।

बगुला अभी यह बात कह ही रहा था कि केकड़े ने अपने तीखे दाँत बगुले की नरम, मुलायम गरदन पर गड़ा दिए। बगुला वहीं मर गया। उसकी गरदन कट गई।

केकड़ा मृत बगुले की गरदन लेकर धीरे-धीरे अपने पुराने जलाशय पर ही आ गया। उसे देखकर उसके भाई-बन्दों ने उसे घेर लिया और पूछने लगे क्या बात है? आज मामा नहीं आए? हम सब उनके साथ जलाशय पर जाने को तैयार बैठे हैं।

केकड़े ने हँसकर उत्तर दिया-मूर्खों! उस बगुले ने सभी मछलियों को यहाँ से ले जाकर एक शिला पर पटककर मार दिया है। यह कहकर उसने अपने पास से बगुले की कटी हुई गरदन दिखाई और कहा-अब चिंता की कोई बात नहीं है, तुम सब यहाँ आनन्द से रहोगे।

गीदड़ ने जब यह कथा सुनाई तो कौवे ने पूछा-मित्र! उस बगुले की तरह यह सांप भी किसी तरह मर सकता है।

गीदड़-एक काम करो। तुम नगर के राजमहल में चले जाओ। वहाँ से रानी का कंठहार उठाकर साँप के बिल के पास रख दो। राजा के सैनिक कंठहार की खोज में आएंगे और साँप को मार देंगे।

दूसरे ही दिन कौवी राजमहल के अंतपुर में जाकर एक कंठहार उठा लाई। राजा ने सिपाहियों को उस कौवी का पीछा करने का आदेश दिया। कौवी ने वह कंठहार साँप के बिल के पास रख दिया। साँप ने उस हार को देखकर उस पर अपना फन फैला दिया था। सिपाहियों ने साँप को लाठियों से मार दिया और कंठहार ले लिया।

उस दिन के बाद कौवा-कौवी की संतान को किसी साँप ने नहीं खाया। तभी मैं कहता हूँ कि उपाय से ही शत्रु को वश में कर लेना चाहिए।

दमनक ने फिर कहा-सच तो यह है कि बुद्धि का स्थान बल से बहुत ऊँचा है। जिसके पास बुद्धि है, वही बली है।

संग्रह स्रोत-पंचतंत्र

विचार करें

स्वामी विवेकानंद कहा करते थे कि भारतीय लोग अपने संकल्पबल को भूल गये हैं, इसीलिए गुलामी का दुख भोग रहे हैं। हम क्या कर सकते हैं.....ऐसे नकारात्मक चिंतन द्वारा वे संकल्पहीन हो गये हैं जब कि अंग्रेज का बच्चा भी अपने को बड़ा उत्साही समझता है और कार्य में सफल हो जाता है, क्योंकि वह ऐसे विचार करता है मैं अंग्रेज हूँ। दुनिया के बड़े भाग पर हमारी जाति का शासन रहा है। ऐसी गौरवपूर्ण जाति का अंग होते हुए मुझे कौन रोक सकता है सफल होने से? मैं क्या नहीं कर सकता? बस ऐसा विचार ही उसे सफलता दे देता है। जब अंग्रेज का बच्चा अपनी जाति के गौरव का स्मरण कर दृढ़ संकल्पवान बन सकता है तो आप क्यों नहीं बन सकते है?

विवेकानंद

बालक बालिकाओं के लिए उपयोगी बातें

बहुत सी छोटी-छोटी बातें होती हैं, जिन पर प्रारम्भ में ध्यान दिया जाय तो वे बहुत अधिका लाभ करती हैं और उनकी उपेक्षा कर दी जाय तो बहुत हानि होती है। पहले-पहले ध्यान देने से अनेक अच्छाइयाँ स्वभाव बन जाती हैं उनके लिए कोई विशेष श्रम नहीं करना पड़ता। किन्तु आरम्भ में ध्यान न दिया जाये तो स्वाभाव को बदलने में बड़ी कठिनाई होती है। परंतु अपनी भूल का जब पता लगे, तभी से उसे दूर करने और अच्छा स्वभाव डालने का पक्का निश्चय कर लेना चाहिए। जिसका निश्चय पक्का है, वह अवश्य सफल होगा। यदि प्रारम्भ में सफलता न मिले तो निराश नहीं होना चाहिए। बराबर श्रम करते ही रहना चाहिए।

स्वास्थ्य, सम्मान और सुख-शांति-ये तीन मुख्य चीजें हैं। हमारा शरीर स्वस्थ रहे, हमारी सब इन्द्रियाँ ठीक-ठीक काम करें, वे आगे चलकर दुर्बल न जो जायँ। सब लोग हमारा आदर करें, हमें कोई बुरा न कहे, हमारा तिरस्कार न हो और हमारे चित्त में उद्वेग न आवे, मन चंचल न बना रहे और सदा प्रसन्न रहे। कष्ट तो सभी के जीवन में आ सकते हैं लेकिन जो लोग इन बातों को तुच्छ समझ कर इन नियमों का पालन नहीं करते, उनके जीवन में रोग, शोक, अपमान, अशांति बड़े-बड़े कष्ट आते हैं

1. जो गुरुजनों (बड़ों) का आदर करता है, उनको नित्य प्रणाम करता है, उसे आयु, बल, विद्या और यश की वृद्दि होती है। जो इसके विपरीत बड़ों का आदर नहीं करता या उनका तिरस्कार करता है, उसके आयु, बल, विद्या, और यश का नाश होता है।
2. सोते समय सदा दक्षिण या पूर्व सिर करके सोओ। उत्तर या पश्चिम सिर करके सोने से आयु क्षीण होती है। इसी प्रकार दक्षिण मुख करके भोजन करने से भी आयु का ह्रास होता है।
3. भजन, पूजन, भोजन आदि उत्तम कर्म पूर्व या उत्तर मुख करके करना हितकारी है।
4. स्वस्थ रहने के लिए शरीर की बाहरी और भीतरी स्वच्छता तथा नियमित व्यायाम आवश्यक है।
5. बासी और सड़ा भोजन बुद्धि को निश्चय ही मलिन बनाता है और स्वास्थ्य का नाश करता है।
6. तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट आदि सब प्रकार की नशीली वस्तुएं स्वास्थ्य को नष्ट करती हैं।
7. भोजन सात्विक, सुपाच्य तथा ऋतु के अनुकूल होना चाहिए।
8. बहुत गरम भोजन, चाय तथा बहुत गरम दूध पीना अथवा बहुत ठंडा भोजन, बर्फ या बर्फ से बने पदार्थ खाना पेट को तो खराब करता ही है, इससे दाँत शीघ्र गिर जाते हैं।
9. खड़े-खड़े भोजन करना, चलते-फिरते भोजन करना, भोजन करते समय बातें करना-ये हानिकारक है।
10. भोजन बैठकर, मौन होकर प्रसन्नतापूर्वक करना चाहिऐं।

सामान्य जन-जीवन का दर्पण- "राम की शक्ति पूजा"

आदर्श गृहस्थ-जीवन, आदर्श राजधर्म, आदर्श पतिधर्म, आदर्श भात्र-धर्म साहित्य के सभी रसों से परिपूर्ण, उत्तम काव्य-लक्षणों से युक्त, वैराग्य और सदाचार की शिक्षा देनेवाला, बालक, युवा और बृद्ध सबके लिए समानोपयोगी, सर्वांगसुंदर ग्रंथ 'रामचरित मानस' की रचना करते समय जब तुलसी दास ने 'स्वांत: सुखाय रघुनाथ गाथा' लिखा होगा तब कदाचित ही सोचा होगा की कालांतर मे यह ग्रंथ सनातन धर्म का मानक धर्मग्रंथ साबित होगा। सदियों से निर्गुण और सगुण पंथियों ने राम के पात्र को एक नायक के रूप में ही व्याख्यायित किया है। हिन्दी साहित्य के अनुरागी के रूप में जब हम हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का अवगाहन करते हैं तो विस्तार और विकास की दृष्टि से जो युग हिन्दी साहित्यानुरागियों को आकृष्ट करता है वह युग है 'छायावाद'। कहा भी जाता है सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का स्वर्णकाल यदि भक्ति-काल रहा है तो आधुनिक हिन्दी साहित्य का स्वर्णकाल 'छायावाद' रहा है। गद्य और पद्य दोनों विधाओं मे अभूतपूर्व विश्वास, विकास, विस्तार और विविधता का आस्वादन होता है छायावाद की रचनाओं में । यदि भक्ति-काल के चार स्तम्भ सूरदास, कबीरदास, तुलसी दास और मालिक मुहम्मद जायसी थे तो छायावाद के चार स्तम्भ सुमित्रानंदन पंत, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा थीं । हालांकि आज के पाठक का विश्लेषण हमसे इतर हो सकता है लेकिन यदि हम वैराग्य, भक्ति और अध्यात्म को थोड़ी देर के लिए इन सभी कवियों की रचनाओं से पृथक कर दें और खालिस काव्य-सौंदर्य की नियत से आंकलन करें तो पाएंगे की सूरदास का सौंदर्य-बोध का संस्पर्श हमें सुमित्रानंदन पंत की कविताओं में मिलता है और तुलसी दास की व्यापकता का दिग्दर्शन जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में कर सकते हैं। वहीं मालिक मुहम्मद जायसी का रहस्यवाद महादेवी में मिलता है तो कबीर की स्पष्टवादिता और पौरुषता का स्पंदन सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' जी की कविताओं में महसूस किया जा सकता है।

खैर! उपर्युक्त सभी बातें सूक्ष्म विश्लेषण की हो सकती हैं और पूरी तरह अकादमिक भी परंतु आज हम जिस बिषय पर स्वांत: सुखाय चर्चा करना चाहते हैं वह है छायावाद युग के बेढ़ब और क्रांतिकारी कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविता "राम की शक्ति पूजा" । बताते चलें की यूं तो हम सबने अपने अध्ययन-काल में कभी न कभी, मजबूरी मे परीक्षा-उत्तीर्ण करने की नीयत से ही सही, इस लंबी कविता को अवश्य पढ़ा होगा। साहित्य-समीक्षक इसे खंड-काव्य और प्रबंध-काव्य भी कहते हैं। जाहिर है मैंने भी ऐसे ही पढ़ा था। संयोग ऐसा बना कि हाल ही में एक कार्यक्रम के दौरान 'अंतस्' पत्रिका के मुख्य संपादक प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा ने जब श्रोताओं को बताया कि जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब व्यक्ति अवसाद-ग्रस्त हो जाता है अथवा किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति उत्पन्न होती है तो उसे उससे उबरने के लिए कभी कभी किसी सहारे का अवलंबन लेता पड़ता है तो कभी खुद से ही जद्दोजहद करनी पड़ती है। ऐसे पल उनके जीवन में भी आए हैं और ऐसी स्थिति में वे निराला जी की 'राम की शक्तिपूजा' कविता पढ़ते हैं और फिर वे अपने अंदर एक आंतरिक शक्ति का प्रादुर्भाव महसूस करते हैं। उनके इसी वक्तव्य से प्रेरित हो मैंने भी कई बार, कभी सतही तौर पर और कभी सूक्ष्म तौर पर, इस कविता का अध्ययन किया और मैं बता दूँ कि हर बार एक नई ऊर्जा को

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

महसूस किया । परिस्थिति-जन्य मानवीय संवेदनाओं जैसे-कुंठा, अवसाद, अपमान, पराजय जैसी भावनाओं से उठकर कर्तव्य-पारायण होकर अपने लक्ष्य को प्राप्त करना ही इस कविता का विधेय है। कहना न होगा की निराला जी के निराले व्यक्तित्व की निराली कविता है "राम की शक्ति पूजा"। मुझे कई बार व्यक्तिगत रूप से लगा कि मैं अपनी इस अनुभूति को पाठकों के समक्ष इस प्रत्याशा से रखूँ कि यदि संभव हो तो एकबार "राम की शक्ति पूजा" अवश्य पढें और उसके पात्रों को हमारे समाज मे दिन-प्रतिदिन विचरण करने वाले राम और रावण के रूप में ही देखने का प्रयास करें; विश्वास है कि नई अनुभूति होगी।

शोषकों के प्रति आक्रोश, शोषितों के लिए सहानुभूति से परिपूर्ण क्रांति और चेतना का उद्घोष करने वाले निराला ने अपनी इस कविता में अध्यात्म और आस्था के उस पौराणिक पात्र को विस्तार दिया है जिसके स्मरण मात्र से ही सामान्य जन के अन्तःकरण में सत्-चित और आनंद के भाव का संचरण होने लगता है। 'राम की शक्ति पूजा' का कथानक यूं तो पौराणिक संदर्भ में राम-रावण का युद्ध हो सकता है परंतु अपने वास्तविक अर्थ में यह धर्म और अधर्म का युद्ध है। इसमें कवि ने कथा के नायक राम को सामान्य मानव-धर्म का निर्वहन करते हुए स्थापित किया है।

राम की शक्ति पूजा के कथानक को गढ़ते समय निराला ने पौराणिक परंपरा की मर्यादा को जीवंत रखना अपना ध्येय नहीं बनाया है बल्कि वे अपने राम को देवत्व के धरातल से उतारकर सामान्य मानवोचित गुण-दोषों के साथ व्याख्यायित करना चाहते हैं। सूक्ष्म अध्ययन करें तो ऐसा लगता है की 'राम की शक्ति पूजा' के राम हम जन सामान्य में से कोई है, जो हरपल जीवन और जगत-जनित संघर्षों में स्वयं से जूझ रहा है। कभी हारकर जीतता है तो कभी जीत कर हारा हुआ महसूस करता है।

जैसे जीवन में पल प्रति पल परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं वैसे ही शक्ति की पूजा में राम और रावण के बीच युद्ध की दिशाएँ बदलती रहती हैं। महामाया अपनी महिमा से असुरों का ही हित साधते हुये दिखलाई पड़ती हैं। राम का धैर्य कभी शत्रुओं का रणकौशल देखकर तो कभी अपनी परास्त होती हुई सेना की दशा को देखकर संशयग्रस्त और हतप्रभ हो चुका है। लेकिन तभी पत्नी का स्मरण उनको चैतन्य अवस्था में लौटाता है -

देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का, -प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का-नयनों से गोपन-प्रिय सम्भाषण,-
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान-पतन,-
xxx xxx xxx xxx xxx xxx
सिहरा तन, क्षण-भर भूला मन, लहरा समस्त,
हर धनुभंग को पुनर्वार ज्यों उठा हस्त,
फूटी स्मिति सीता ध्यान-लीन राम के अधर,
फिर विश्व-विजय-भावना हृदय में आयी भर

उल्लसित राम पुनः पूरे मनोयोग से कर्म-साधने और कर्तव्य-बोध के प्रति सन्नद्ध होते हैं की फिर उन्हें शत्रुओं के खेमे से विजय का अट्टहास सुनाई पड़ता है।

स्थिर राघवेंद्र को हिला रहा फिर फिर संशय
रह रह उठता जग जीवन मे रावण जय जय

राम की यह आलोकित चेतना असुरों की सहायता के लिए आई महामाया की शक्ति को देखकर लुप्त हो जाती है। युद्ध की प्रतिकूल परिस्थितियाँ उनकी उल्लसित भाव-दशा को नैराश्य में बदल देती है। सेना के नायक की इस हृदय-विदारक अंतरमन की छटपटाहट का भान कर उनका सेनानी हनुमान सम्पूर्ण भूमंडल का विनाश करने को उद्दत होता है :-

करने को ग्रस्त समस्त व्योम कपि बढ़ा अटल,
लख महानाश शिव अचल, हुए क्षण-भर चंचल

हनुमान के रौद्र रूप से होने वाली विनाशलीला को भांपकर शक्ति माँ का रूप धारण कर हनुमान को, राम के आराध्य शिव स्मरण करवाकर और अधर्म का भय दिखला कर, शांत कर देती हैं;

यह महाकाश, है जहाँ वास शिव का निर्मल,
पूजते जिन्हें श्रीराम उसे ग्रसने को चल
क्या नहीं कर रहे तुम अनर्थ? सोचो मन में,
क्या दी आज्ञा ऐसी कुछ श्री रघुनन्दन ने?

महाकवि तुलसी दास ने लिखा है-

आपद काल परखिये चारी । धीरज धर्म मित्र अरु नारी॥

और जब युद्ध-नायक राम 'अन्याय जिधर है उधर शक्ति-या-है महाशक्ति रावण को लिए अंक' की रहस्यमयता को नहीं समझ पाते तब उनके सेनापति मित्र जामवंत अकारण विचलित होने से रोकते हुए सुझाव देते हैं-

आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर
तुम वरो विजय संयत प्राणों से प्राणों पर
रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त
तो निश्चय तुम हो सिद्ध, करोगे उसे ध्वस्त
शक्ति की करो मौलिक कल्पना, करो पूजन
छोड़ दो समर जब तक न सिद्धि हो, रघुनंदन

मित्र के परामर्श से आशा और उल्लास का पुनः संचरण होता है और शक्ति की पूजा हेतु राम 108 नीलकमल के फूलों के साथ अखंड विश्वास लिए हुये शक्ति का आह्वान करते हैं। लेकिन ये क्या! यज्ञ पूर्ण होने से पूर्व ही महामाया ने फिर खेल खेल दिया और अंतिम नीलकमल का पुष्प चुरा लिया। राम अधीर हो उठते हैं और पल भर मे ही उनके समक्ष उनका पूरा जीवन-वृत घूम गया-

धिक! जीवन को जो पाता ही आया विरोध
धिक! साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध
जानकी! हाय उद्धार प्रिया का हो न सका
वह एक और मन रहा राम का जो न थका

उन्हें फिर कर्तव्य-बोध का भान होता है और वह समझ लेते हैं की अब उनके धैर्य की अग्नि-परीक्षा होनी है। उन्हें सहसा याद आता है की माता उनको राजीवनयन कह कर प्यार से पुकारा करती थीं। तत्क्षण चेतना में राजीवनयन होने का आत्म गौरव उन्हें अपने चक्षु को समिधा के रूप मे शक्ति को चढ़ाने के लिए प्रेरित करता है और तत्काल ही राम अपनी तलवार से अपने दाहिने नेत्र को अर्पित करने को उद्दत होते है-

कहकर देखा तूणीर ब्रह्मशर रहा झलक,
ले लिया हस्त, लक-लक करता वह महाफलक।
ले अस्त्र वाम पर, दक्षिण कर दक्षिण लोचन
ले अर्पित करने को उद्यत हो गये सुमन
जिस क्षण बँध गया बेधने को दृग दृढ़ निश्चय,
काँपा ब्रह्माण्ड, हुआ देवी का त्वरित उदय-
साधु, साधु, साधक धीर, धर्म-धन धन्य राम!
कह, लिया भगवती ने राघव का हस्त थाम।

महाशक्ति का प्राकट्य होता है और वह साधना, बलिदान, वंदना और कर्तव्य की वेदी पर सर्वस्व त्याग के प्रतीक राम का हाथ पकड़ लेती हैं और विजय का वरदान देती हुई वह नायक राम मे विलीन हो जाती है।

होगी जय, होगी जय, हे पुरूषोत्तम नवीन।
कह महाशक्ति राम के वदन में हुई लीन।

वस्तुतः निराला जी कविता 'राम की शक्ति पूजा' के नायक का चित्रांकन दशरथ-पुत्र राम का न होकर आधुनिक समाज के राम का है। आज जहां समाज मे नित्य नैतिकता, धर्मपरायणता, सहिष्णुता, बिश्व-बंधुत्व की भावना का ह्रास हो रहा है। अनाचारी, दुराचारी, व्यभिचारी जैसे चरित्रों की चदुर्दिक वृद्धि हो रही है ऐसे में ये कविता राम, हनुमान, बिभीषण, जामवंत, महामाया और रावण जैसे पात्रों के माध्यम से प्रतीकात्मक रूप से स्वार्थहीनता, त्याग, सहिष्णुता, सेवा-भाव, दया, मित्रता आदि मानवीय सम्बन्धों का सूक्ष्म एवं व्यापक चित्रण करती है। राम के चरित्र में निराला जी ने जिस आस्था से आशा और विश्वास का संचार किया है वह आज के विश्व-कल्याण का सूत्र है।

विपत्तियों, विघ्न-वाधाओं से असहाय हो भंवर मे फंस जाने के बाद भी मनुष्य को उल्लास, उत्साह और उम्मीद का संबल नहीं छोडना चाहिए। कर्म-क्षेत्र में महत्ता जीत या हार की उतनी नहीं होती जितनी पुरुषार्थ की होती है। अंतिम विजयश्री उसी योद्धा का वरण करती है जिसकी दृष्टि साधन और साध्य की एकरूपता मे होती है। राम की संकल्पवृत्ति ही रावण-वध का कारण बनती है।

इस कविता के माध्यम से निराला ने मानव-हृदय को जीवन के प्रति आशा का आलोक ही नहीं सौंपा है वरन भारतीय संस्कृति को पुनर्स्थापित किया है जिसमें संस्कार और संस्कृति के सभी तत्वों को समाहित करने के साथ विश्व-विजयनी, विजय-वैजयंती भावना को भी अभिव्यक्ति प्रदान की है। इतना ही नहीं यदि और सूक्ष्म अवलोकन करें तो पाएंगे की स्वयं निराला जी का व्यक्तित्व भी कथा-नायक के रूप मे संघर्ष करता दिखलाई पड़ता है । इतिहास साक्षी है निराला जी का सम्पूर्ण जीवन भी झंझावातों के तानों-बानों मे ही उलझा रहा, विशेष रूप से पुत्री सरोज को खो देने के उपरांत आकंठ क्लांत निराला निराश हो चुके थे। किन्तु 'वह एक और मन रहा राम का जो न थका' लिखकर उन्होने एक तरह से अपने आत्म-नियंत्रण और स्वाभिमान के विजय की घोषणा की थी।

बहरहाल, जो भी हो 'राम की शक्ति पूजा' में निराला जी ने जिस कथानक-योजना को विस्तार दिया है उसकी छाया-प्रतिछाया सामान्य जन -जीवन मे चारों तरफ दिखलाई पड़ती है। वस्तुतः संकल्प और व्यापक जीवन-दर्शन से ही जीवनागत उत्थान-पतन, सुख-दुख, आरोह-अवरोह आदि नित्य की गतिविधियों में समरसता का भाव रखकर ही आशा, उत्साह के साथ सफलता के फलागम की अपेक्षा की जा सकती है।

वेदप्रकाश सिंह
उप कुलसचिव

आप जैसे विचार करेंगे वैसे आप हो जायेंगे
अगर अपने आपको निर्बल मानेंगे तो
आप निर्बल बन जाएंगे
और यदि जो आप अपने आपको
समर्थ मानेंगे तो आप समर्थ बन जाएंगे।

स्वामी विवेकानंद

छायांकन-सार्थक सिंह गौर

कार्यालयीन उपयोगी टिप्पणियाँ

उत्तर का मसौदा अनुमोदन के लिए प्रस्तुत है	Draft reply is put up for approval
मामला विचाराधीन है	Matter is under consideration
अनुकूल कार्रवाई के लिए	For favourable action
अग्रेषित और संस्तुत	Forwarded and recommended
अनुमति दी जाए	May be permitted
शीघ्र अनुपालन कीजिए	Please expedite compliance
इसे सर्वथा गोपनीय समझें	Please treat this as strictly confidential
चर्चा कीजिए	Please discuss
बात कीजिए	Please speak
अनुस्मारक भेजा जाए	Reminder may be sent
आज ही जारी करें	Issue today
देख लिया, धन्यवाद	Seen, thanks

रसानुभूति (रौद्र-रस)

ओ दनुज! हटा नापाक कदम, यह भूमि
नहीं सह पायेगी
हिमवान दरक कर टूटेगा, धरती नीचे
धँस जायेगी
नटराज बजाते हैं डमरू, तांडव होने
ही वाला है
खुल रही तीसरी आँख, तीव्र हो रही
क्रोध की ज्वाला है
है रोम-रोम में वह्नि, देश की नस-नस
में चिनगारी है
जननी का दूध पुकार रहा, मर-मिटने
की तैयारी है
ओ कपटाचारी चीन! सजग, खूंखार
दरिन्दो! सावधान!
हम अमृत-पुत्र, हम मृत्युंज्जयी, रे!
अन्तिम विजय हमारी है

विमल राजस्थानी

संपर्क

राजभाषा प्रकोष्ठ
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष-0512&259&7122, 2596192
ईमेल-arunk@iitk-ac-in, vedps@iitk-ac-in
sunitas@iitk.ac.in

अभिकल्प-सुनीता सिंह